May 2024

अरफ़ात किरण

मासिक

रायबरेली

लोकतन्त्र की एक सेहतमन्द पहचान

"किसी लोकतान्त्रिक देश में हुकूमत की तब्दीली और एक पार्टी से दूसरी पार्टी की तरफ़ सत्ता, शासन-प्रशासन और देश की व्यवस्था के अधिकार का बदलना कोई अनोखी, चिंताजनक और परेशान करने वाली बात नहीं बल्कि यह एक सेहतमन्द लोकतन्त्र की पहचान है। एक ही पार्टी के हाथ में देश की सत्ता व शासन-प्रशासन का मुस्तक़िल तौर पर या बिना किसी व्यवधान के लम्बे समय तक रह जाने का मतलब यह है कि देश का पट्टा उसके नाम लिख दिया गया है और देश वाले पसंद करें या ना पसंद करें, उनकी समस्याएं हल हों या न हों, उनको उसी के अधीन रहना है।"

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

नस्ल-ए-आदम की सबसे बड़ी बेशर्मी

"आज उम्मीद व कामयाबी के जिस सूरज से दूसरों के ऐवाने इक़बाल रोशन हो रहे हैं, कभी हमारे सरों पर भी चमक चुका है और जिस बहार के मौसम ऐश व निशात से हमारे दुश्मन गुज़र रहे हैं, एक ज़माना था कि हमारे बाग़ व चमन ही में उसके झोंके आया करते थे, अब किसी से कहिए कि कहने का वक़्त ही चला गया:

गुज़र चुकी है यह फ़स्ले बहार हम पर भी

हम हमेशा से ऐसे नहीं हैं जैसे कि अब नज़र आ रहे हैं, ज़माना हमेशा हमारे मुख़ालिफ़ नहीं रहा, मुद्दतों उम्मीद का हममें आशियाना रहा है, बल्कि हमारे सिवा उसका कहीं ठिकाना नहीं था, अब दुनिया में हमारे लिए मातम व नाउम्मीदी, दो ही काम करने के लिए बाक़ी रह गए हैं, लेकिन ज़्यादा दिन नहीं गुज़रे कि हमारी ज़िन्दगी के लिए इस दुनिया में और भी बहुत से काम थे।

बेहतर है कि उसके बारे में मेरी ज़बान पर साफ़-साफ़ सवालात हों, फिर क्या वक़्त आ गया है कि हम हमेशा के लिए मायूस हो जाएं? क्या हम यह समझ लें कि उम्मीद व यास की तक़सीम में एक हमारे लिए यास ही रह गई है और क़यामत आने में जितना वक़्त बाक़ी रह गया है उसमें सिर्फ़ गुज़रे हुए का मातम और आगे की नाउम्मीदी दो ही काम करने के लिए बाक़ी रह गए हैं? क्या जो कुछ हो रहा है, हमारी ज़िन्दगी की आख़िरी कोशिश और मौत के इस्तिहज़ार की आख़िरी हरकत है? क्या चिराग़ में तेल ख़त्म हो गया और बुझने का वक़्त क़रीब है?

मुमकिन है कि मायूसी का ग़ल्बा मेरे यक़ीन को कमज़ोर करे, इसलिए मुमकिन है कि मैं तस्लीम कर लूं कि हमारे मिटने का वक़्त आ गया है, मगर मैं नहीं समझता कि किसी मुसलमान का दिल जिसमें एक ज़र्रा भी नूरे इस्लाम बाक़ी नहीं है, एक मिनट, एक लम्हा, एक नुक़्ते और नुक़्ते के दसवें हिस्से के लिए भी उसको मान सकता है कि इस्लाम के मिटने का वक़्त आ गया है। इन्सानों ही ने हमेशा इन्सानों को मग़लूब किया है और नई क़ौमों ने हमेशा पुरानी क़ौमों की जगह ली है, इस दुनिया में इन्सान का दुश्मन कोई देव नहीं बल्कि इन्सान ही है।

तो यह कोई अजीब बात नहीं, अगर हमको हमारे सौ साल के दुश्मन मग़लूब करके फ़ना कर दें, मगर ऐ ख़ुदा की रहमत की तौहीन करने वालो! मैं यह क्यूंकर मान लूं कि एक सलीब चढ़ी हुई लाश हय्यि व क़य्यूम (ज़िन्दा व हमेशा रहने वाले) ख़ुदा-ए-जुल जलाल को मग़लूब कर सकती है और मायूसी चाहे कितनी हो मगर क्यों मान लूं कि इन्सानी गिरोह ख़ुदा-ए-क़ादिर व जुलजलाल की ताक़त व बड़ाई को शिकस्त दे सकता है।

हैरान हूं कि आज के मुसलमान मायूस हो रहे हैं, हालांकि मैं तो कुफ़्र व मायूसी के तसव्वुर से कांप जाता हूं, क्योंकि यक़ीन करता हूं कि मायूस होना ख़ुदा-ए-जुलजलाल वल इकराम की शान-ए-रहमत व रुबूबियत के लिए सबसे बड़ा इन्सानी कुफ़्र और उसकी जनाब में सबसे ज़्यादा नस्ल-ए-आदम की बेशर्मी है।

अल्लामा सैय्यद सुलेमान नदवी (रह०)

(क़ानून-ए-उरुज-ओ-ज़वाल: 115-118)

بِسۡمِ ٱللَّهِ ٱلرَّحۡمَٰنِ ٱلرَّحِيمِ

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:05 मई 2024 ई0 वर्ष:16

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

मुद्रक

मो० हसन नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

दानिशमन्दी का तक़ाज़ा

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

"जब लोग ज़ालिम को देखकर उसका हाथ न पकड़ें (यानि ज़ुल्म न रोक दें) तो क़रीब है कि अल्लाह तआला उसका अज़ाब लोगों पर आम कर दे।"

(सुनन तिरमिज़ी: 2321)

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू0पी0.229001

प्रति अंक 15रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला ख़ाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू0

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

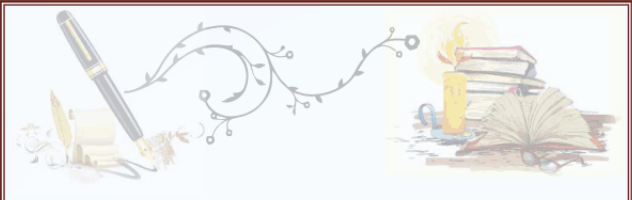

सुकून-ए-मंज़िल-ए-मक़सूद के तमन्नाई!

मौलाना आमिर उस्मानी

अगरचे लज़्ज़त-ए-काम व दहन फ़राहम है
मगर दिलों पे बड़ी बे कसी का आलम है

न पास-ए-मेहर व वफ़ा है न रब्त-ए-बाहम है
नुजूमे ताना बल्ब हैं यह इब्ने आदम है

न ख़म हुआ था किसी दर पे जो ख़ुदा के सिवा
वह सर ख़ुदा के सिवा आज हर जगह ख़म है

बहुत है इश्क़ को एक इल्तिफ़ात-ए-दर-ए-परदा
मगर हवस को निशात-ए-दवाम भी कम है

ज़बां पे इश्क़ के नग़्मे दिलों में सोरिश-ए-ग़म
यह ज़िन्दगी तो नहीं.........ज़िन्दगी का मातम है

मैं चल पड़ा हूं उसी मंज़िल-ए-हसीं की तरफ़
कि जिसकी राह में करब-ओ-बला मुसल्लम है

न इज़्तिराब, न दर्द-ओ-ख़लिश, न सोज़-ओ-गुदाज़
दिल-ए-ख़राब हमें तेरी मौत का ग़म है

यह किस मक़ाम पर लाया है मुझको दिल कि जहां
हर एक ताज़ा जराहत का नाम मरहम है

सुकून-ए-मंज़िले मक़सूद के तमन्नाई!
यह हमसे पूछ मुहब्बते जिहाद-ए-पैहम है

हुआ है जोश-ए-अमल और भी फ़िज़ूं आमिर
ख़ुदा का शुक्र कि हमसे ज़माना बरहम है

इस अंक में:

निर्णायक बुद्धिमता की आवश्यकता.................................3

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

राजनीतिक बदलाव – एक सेहतमन्द पहचान.....................4

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0)

लोकतान्त्रिक व्यवस्था में मुसलमानों की हिकमत–ए–अमली क्या हो?..5

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

इल्मी दुनिया की सबसे बड़ी ख़िदमत................................7

मौलाना जाफ़र मसऊद हसनी नदवी

तक़वा क्या है?...9

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

तलाक़ के चन्द मसाएल..12

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

शरीअत–ए–मुहम्मदी (स0अ0व0) – दाएमी राह–ए–निजात.......14

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

फ़िलिस्तीनी भाई–बहनों ने सहाबा की यादें ताज़ा कर दीं..........16

मुहम्मद ज़ाहिद हुसैन नदवी जमशेदपुरी

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) और औरतों का हक़.......................17

मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

संसदीय चुनाव और मुसलमानों की ज़िम्मेदारी.....................19

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

सम्पादकीय

निर्णायक बुद्धिमता की आवश्यकता

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

चुनावों का सिलसिला जारी है, देश इस समय ऐसे दोराहे पर खड़ा है कि ज़रा सी चूक उसको कहीं से कहीं पहुंचा सकती है, "निर्णायक बुद्धिमता की आवश्यकता" का मुहावरा इस वक़्त सामने है। ज़रा सी ग़फ़लत और बेशऊरी देश के भविष्य को दांव पर लगा सकती है। इस समय बड़ी ज़िम्मेदारी मुसलमानों की है जिन्होंने हिन्दु भाईयों को साथ लेकर इस देश की आज़ादी में बुनियादी किरदार अदा किया गया, यहां के लिए जो क़ानून बनाया गया वह यहां के विभिन्न वर्गों के लिए उनकी ज़रूरतों को सामने रखकर बनाया गया और इसमें इस देश के ख़मीर का ख़्याल रखा गया। तीन बातें यहां की बुनियादों में शामिल हैं; लोकतन्त्र, अहिंसा और धर्मनिरपेक्षता। अगर यह बुनियादें न रहीं तो पूरा देश ख़तरे में पड़ जाएगा।

यहां का इतिहास बताता है कि विभिन्न धर्मों व विभिन्न वर्गों के लोग हमेशा प्रेम व भाईचारे के साथ रहे हैं और सबने मिलकर देश को मज़बूत करने का काम किया है। इसी रिवायत को दोहराने की ज़रूरत है, अगर यहां ज़ात, मज़हब की बुनियाद पर लोगों को बांटा जाएगा तो उससे देश ख़तरे में पड़ जाएगा, इन हालात में घर में बैठे रहना, अपनी ज़ाति न इज्तिमाई ज़रूरतों की वजह से इस बुनियादी ज़रूरत को न समझना और इसके लिए वक़्त न देना बहुत ही नाआक़िबत अंदेशी (अदूरदर्शिता) की बात है और यह समझना कि दो वोट क्या असरअंदाज़ होंगे एक बहुत बड़ी भूल है। "क़तरे–क़तरे से दरिया भरता है" हर शख़्स अगर यही सोच ले तो क्या नतीजा निकलेगा?! क़िस्सा मशहूर है कि एक बादशान ने रिआया का इम्तिहान लेने के लिए एक तालाब बनवाया और हुक्म दिया कि सब लोग इसमें एक–एक लोटा दूध रात के अंधेरे में डाल दें, लोगों ने सोचा कि सब ही दूध डालेंगे, हम एक लोटा पानी डाल देंगे तो क्या फ़र्क़ पड़ता है, देखा गया तो सुबह पूरा तालाब पानी से भरा हुआ था। आदमी सोचता है सभी कर रहे हैं, हमने किया तो क्या फ़र्क़ पड़ेगा, यह एक बहुत बड़ी चूक है। इससे कभी–कभी बहुत भयानक नतीजे सामने आते है।

फिर एक सोचने की बात यह भी है कि अल्लाह मदद करने वालों के साथ है, आदमी क़दम न बढ़ाए और हालात बेहतर करने के लिए जो वह कर सकता है वह भी न करे तो अल्लाह की मदद भी उठ जाती है। इसलिए मौजूदा हालात को देखते हुए यह ज़िम्मेदारी हर शख़्स की है, वह कितना ही दीनदार हो और दीनी कामों में मशग़ूल हो लेकिन मुल्क की ज़रूरत बल्कि इन्सानियत की ज़रूरत को देखते हुए उसे भी आगे बढ़ना है, एक वोट की भी बड़ी क़ीमत है।

इसके साथ एक उमूमी मेहनत इफ़्हाम व तफ़्हीम की है, ज़हनों को जिस तरह ख़राब किया गया है, उनके ज़हर का तिरयाक़ हमारे पास मौजूद है, इन्सान को अल्लाह ने धड़कता हुआ दिल दिया है, वह किसी की मुहब्बत को देखता है तो उसके अन्दर भी मुहब्बत पैदा होती है और जब नफ़रत को देखता है तो उसके अन्दर भी नफ़रत की आग भड़कने लगती है, थोड़ी सी कुर्बानी के साथ इस आग को बुझाना है, हो सकता है कि आग बुझाने में आग की कुछ लपटें बुझाने वालों को भी अपनी लपेट में ले ले लेकिन आगे फिर मैदान कुर्बानी देने वालो का है, दुनिया बदलती है, वह ज़माने का रंग देखती है और ज़िम्मेदारी बुनियादी तौर पर मुसलमानों की है, एक फ़ौरी काम है वोटिंग का और फिर मुस्तक़िल काम है ज़हन व दिमाग़ तक पहुंचने का और दिल के दरवाज़ों पर दस्तक देने का, ज़माना मुन्तज़िर है आपका, अगर हम और आप अब भी न जाग तो शायद आने वाला वक़्त हमको माफ़ न कर सकेगा।

राजनीतिक बदलाव

एक सेहतमन्द पहचान

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0)

किसी लोकतान्त्रिक देश में सत्ता परिवर्तन और एक पार्टी से दूसरी पार्टी की तरफ़ सत्ता, ताक़त और देश की व्यवस्था के चलाने के अधिकार का परिवर्तित होना कोई अनोखी, चिंताजनक और परेशान करने वाली बात नहीं है बल्कि यह एक सेहतमन्द लोकतन्त्र की पहचान है। एक ही पार्टी के हाथ में देश की सत्ता और व्यवस्था का लगातार लम्बे समय तक रह जाने का मतलब है कि देश का पट्टा उसके नाम लिख दिया गया है और देशवासी पसंद करें या नापसंद करें, उनकी समस्याएं हल हों या न हों, उनको उसी के अधीन रहना है। अगर कोई पार्टी या व्यवस्था (अपनी कमियों या किसी ग़लत और मुबाल्ग़ा आमेज़ मुख़ालिफ़ तास्सुर की बिना पर) सत्ता से वंचित हो जाती है और दूसरी पार्टी उसकी जगह ले लेती है तो इसका मतलब यह भी है कि पिछली पार्टियां अपनी जद्दोजहद, हक़ीक़त पसंदी और इस्लाह व तरक़्क़ी के बाद फिर सत्ता में आ सकती है और नई सत्ता में आने वाली पार्टी अपनी ख़ामियों और कोताहियों और अपने किये हुए वादों को पूरा न करने की बुनियाद पर सत्ता से वंचित हो सकती है। इस तरह हर राजनीतिक पार्टी और क़यादत को जद्दोजहद करने का न सिर्फ़ मौक़ा मिलेगा बल्कि उसके लिए एक ताक़तवर मुहर्रिक और अपने को और अधिक लाभकारी और नेतृत्वयोग्य साबित करने का साधन है जो बहरहाल देश व जनता के हित में है।

किसी राजनीतिक पार्टी या नेतृत्व का बिना योग्यता एक लम्बे समय तक सत्ता में रहना तथा देश की व्यवस्था पर हावी व क़ाबिज़ रहना बहुत सी ख़राबियों का कारण हो सकता है। ऐसी मोनोपॉली की शक्ल में उस लोकतान्त्रिक सत्ता और राजनीतिक व संवैधानिक सत्ता पार्टी में वह सब ऐब और कमज़ोरियां पैदा हो सकती हैं जो पुराने ज़माने में लम्बे समय तक चलने वाली ख़ानदानी व मौरूसी सल्तनतों और हुक्मरां ख़ानदानों में पैदा हुईं और जिनकी तफ़सीलें और मिसालें हर देश के इतिहास में मौजूद हैं। यह इन्सान की फ़ितरत है जिससे बचना और जिस पर ग़ालिब आना तक़रीबन ख़िलाफ़े फ़ितरत और सोच से परे है।

लेकिन हुकूमतों और पार्टियों की इस तब्दीली से कहीं ज़्यादा ख़तरनाक बात यह है कि इन वजहों पर ग़ौर न किया जाए जो साबिक़ हुक्मरां जमाअत के ज़वाल का बाइस हुए और उन्होंने इस तब्दीली के लिए राह हमवार की और उन वाक़्यों, तजुर्बों और लोगों के ख़्यालों और तास्सुर से फ़ायदा न उठाया जाए जो पुरानी हुकूमत और इन्तिज़ामिया के बारे में उनकी कोताहियों के उमूमी रिएक्शन के तौर पर पैदा हुए थे। दुनिया के इतिहास का एक अच्छा तालिबइल्म इस हक़ीक़त से वाक़िफ़ है कि पुराने ज़माने में उन हुकूमतों शहंशाहों को भी पतन का सामना करना पड़ा जिनका दुनिया में डंका बजता था और वह उस वक़्त की सभ्य दुनिया के बड़े हिस्से पर क़ाबिज़ थीं, जब उन्होंने वाक़्यात, हक़ीक़तें और ज़रूरतों व मसलों से आंखें बन्द कर लें और पेश आने वाले वाक़्यात से कोई सबक़ नहीं लिया। इस सिलसिले में पुरानी तारीख़ में "दि ग्रेट रोमन अम्पायर" का और क़रीब ज़माने में ब्रिटेन और फ़्रांस का नाम लिया जा सकता है जो बहुत से उपनिवेशों और एशिया व अफ़्रीक़ा के बहुत से देशों पर हुकूमत कर रहे थे। कम्यूनिस्ट रूस की वर्तमान सरकार ने भी अपने निज़ाम की बहुत सी कमज़ोरियों और ज़िन्दगी, व्यवस्था और देश की ख़ुशहाली व तरक़्क़ी की राह में अपनी नाकामियों और कमज़ोरियों को स्वीकार किया है और उसकी रोशनी में बहुत से सुधार और बदलाव के लिए (एहतियात और तहफ़्फ़ुज़ के साथ) क़दम उठाया है और उसी अख़लाक़ व जुर्रत व हक़ीक़त पसंदी के आधार पर यूरोप की बहुत सी कम्यूनिस्ट हुकूमतों और देशों में (सीमित व संकुचित पैमाने पर) बदलाव आ रहे हैं। ख़ुद चीन में भी उस बेचैनी और आज़ादी–ए–ख़्याल की परछाइयां नज़र आ रही हैं और ऐसा होना ज़रूरी है और यह सोचने समझने वाले दिमाग़ और रवां–दवां ज़िन्दगी का ख़ास्सा है।

लोकतान्त्रिक व्यवस्था में मुसलमानों की हिकमत-ए-अमली क्या हो?

मुर्शिदुल उम्मत हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (रह0)

जम्हूरी निज़ाम में मुल्क के तमाम लोगों को इन्सानी हुकूक़ में बराबरी हासिल होती है और मुल्क का दस्तूर उसकी ज़मानत देता है, अदालत इसका कन्ट्रोल करती है और इस सिलसिले में अक्सरियती और अक़्लियती अफ़राद दोनों को एक सी हैसियत हासिल रहती है, लेकिन इसका निफ़ाज़ ख़ुद अक़्सरियत और अक़्लियत के अफ़राद की फ़िक्र व तवज्जो के मुताबिक़ ही अमल में आता है। अक्सरियत के अफ़राद को अपनी अक्सरियत की बुनियाद पर निज़ामे हुकूमत में निस्बतन बरतरी हासिल होती है, इस बरतरी की बिना पर सक़ाफ़ती व इक़्तिसादी हुकूक़ को ज़्यादा बेहतर तरीक़े से हासिल करने का उनको ज़्यादा मौक़ा हासिल हो जाता है, जिनकी बिना पर अक़्लियत के अफ़राद को कमी से साबिक़ा पड़ता है लेकिन इस कमी को अगर वह क़ानूनी बुनियाद पर अगर दूर न करा सकते हों तो इसको अपनी निजी तदबीरों और तवज्जो और फ़िक्रमन्दी से पूरा कर सकते हैं। दुनिया की बेदार मग़्ज़ और हौसलामन्द अक़्लियतें इस ज़रूरत को महसूस करती हैं और अपनी मिल्लत की ज़रूरतों के लिए निजी ग़ैर हुकूमती ज़रायों से फ़ायदा उठाते हुए सरगर्मे अमल होती हैं और अपनी इस होशमन्दी से अक्सरियत के मुक़ाबले में पीछे नहीं रहतीं, बल्कि कभी–कभी आगे बढ़ जाती हैं, इसकी मिसालें इस ज़माने में भी अलग–अलग मुल्कों में देखी जा सकती हैं, लेकिन अगर कोई अक़्लियत हालात का जाएज़ा लेने में कोताही करती है और उसके रहनुमा हक़ीक़त पसंदी से दूर और ज़िम्मेदारों की ज़ाहिर दारियों पर एतमाद कर लेने वाले होते हैं तो अक़्लियत अपने मुल्की और इन्सानी हुकूक़ के हुसूल में बेतौजीही का शिकार होती हैं और अक्सरियत के मुक़ाबले में पीछे चली जाती हैं।

हिन्दुस्तान भी उन मुल्कों में है जहां अक्सरियत और अक़्लियत का मामला तवज्जो चाहता है। यहां मुसलमान क़ाबिले ज़िक्र अक़्लियत में हैं और अक़्लियत मामूली नहीं बल्कि बड़ी अक़्लियत है, जिसकी अपनी मज़हबी, तहज़ीबी और समाजी क़द्रें ऐसी हैं कि उनसे दस्तबरदार नहीं हुआ जा सकता, वह कोई महदूद या मक़ामी हैसियत की समाजी इकाई नहीं हैं कि अपने इर्द–गिर्द के माहौल में ज़म हो जाएं, वह अपनी वसीअ और बैनुल अक़वामी बिरादरी रखते हैं, जिससे उनके मज़हबी और अख़्लाक़ी तौर पर बुनियादी रवाबित हैं, वह अपनी इस बिरादरी से बिल्कुल बेताल्लुक़ नहीं हो सकते और उन्होंने अपने माज़ी की तारीख़ में जो मख़्सूस इल्मी व तहज़ीबी वरसा पाया है उससे भी दस्तबरदार नहीं हो सकते लेकिन मक़ामी लिहाज़ से वह एक मुल्क की अक्सरियत के साथ हैं, जो वतनी वाबस्तगी रखते हैं और मुल्क का जो मुश्तरक दस्तूर है उसके तक़ाज़ों और ज़िम्मेदारियों के पूरी तरह पाबन्द हैं, लिहाज़ा देखने की ज़रूरत है कि हमको मुल्क का दस्तूर जो हुकूक़ देता है उनको हम जम्हूरी उसूलों के मुताबिक़ किस तरह हासिल कर सकते हैं और हमारी ज़रूरत की तकमील में जो कमी होती है उसको हम किस तरह दूर कर सकते हैं।

हमारी सबसे बड़ी ज़रूरत मुल्क के अन्दर अपनी बाइज़्ज़त ज़िन्दगी क़ायम करने और उसको बेहतर बनाने और तरक़्क़ी की मौजूदा दौड़ में पीछे न रहने के लिए जो इम्कानात और वसाएल हैं उनसे फ़ायदा उठाने की है। हमको देखना है कि इसमें हमारी सूरतेहाल क्या है और हमको क्या करना है? आज़ादी मिलने के बाद मुल्क तरक़्क़ी के रास्ते में है, हमको देखना है कि इसमें हमारा क्या हिस्सा है और तरक़्क़ी के हुसूल और क़ौमी व अख़्लाक़ी ज़िन्दगी में बेहतर सूरतेहाल हासिल करने में हमारा क्या मक़ाम है? हक़ीक़ते अहवाल के सिलसिले में हमको संजीदा और तामीरी अंदाज़ अख़्तियार करने की

ज़रूरत है। इसमें सिर्फ़ हक़ तलफ़ी करने वालों के ख़िलाफ़ महज़ आवाज़ उठाने से मसला बहुत कम हल होता है, आवाज़ उठाना ग़लत नहीं है, अलबत्ता उससे ज़्यादा ठोस अमली कोशिशों की ज़रूरत है। इसके लिए हमको तालीम के निजी ज़राए और मीडिया का भरपूर इस्तेमाल और हमवतनों के दरमियान टकराव पैदा करने वाली ग़लतफ़हमियों के इज़ाले की कोशिशें करना चाहिए। इस वक़्त मुल्क के अन्दर शिकवा–शिकायत, ख़ुदग़र्ज़ियों और फ़िरक़ावाराना टकराव का जो माहौल बन गया है इसको हम मज़कूरा बाला तरीक़ों से बहुत हद तक दूर कर सकते हैं और उसके ज़रिये हम अपने जम्हूरी और वतनी हुकूक़ को ज़्यादा बेहतर तरीक़े से हासिल कर सकते हैं।

इस वक़्त मुसलमानों को सबसे ज़्यादा जिस चैलेंज का सामना है वह यह है कि उनके मज़हबी और मिल्ली पहचान को मिटाने और उनके तारीख़ी किरदार को बिगाड़ कर पेश करते हुए उनको एक तश्द्दुद पसंद मिल्लत क़रार दिया जा रहा है और इस सिलसिले में उनकी तारीख़ी और मज़हबी यादगारों व आसारे क़दीमा को निशाना बनाया जा रहा है।

ज़रूरत है कि हम इन कोशिशों को नाकाम बनाने के लिए एक तरफ़ मीडिया को असरदार ढंग से अख़्तियार करें और दूसरी तरफ़ अदबी व सक़ाफ़ती सेमिनारों और अख़्लाक़ी मुलाक़ातों और बातचीत के ज़राए से भी काम लें, इससे कम से कम मुआन्दाना मक़सद न रखने वाले ज़हनों की ग़लतफ़हमियां दूर की जा सकती हैं। कोई भी क़ौम हो उसमें मोतदिल सोच रखने वालों ही की अक्सरियत होती है जिनको सूरतेहाल से न सिर्फ़ वाक़िफ़ कराया जा सकता है बल्कि हमनवां बनाया जा सकता है।

इसी के साथ–साथ मुआन्दाना ज़हनियत की कारफ़रमाई का मुक़ाबला क़ानूनी ज़राए से भी किया जा सकता है। इस तरीक़ेकार का फ़ायदा उनके ख़िलाफ़ महाज़आराई और टकराव के तरीक़ों के मुक़ाबले में ज़्यादा होता है क्योंकि राएजुल वक़्त टकराव फ़रीक़े मुख़ालिफ़ में भी टकराव और जोश पैदा करता है और चूंकि अक़्लियत व अक्सरियत के बीच जो तनासुब है उससे वह मुसलमानों के हक़ में नहीं जाता, लिहाज़ा मुसलमान नुक़सान उठाते हैं।

ऊपर दिए गए पहलू को अख़्तियार करने के साथ रज़ाए इलाही के हुसूल के पहलू की तरफ़ बहुत ज़्यादा तवज्जो देने की ज़रूरत है। अफ़सोस की बात है कि हराम माल और नाजाएज़ आमाल में आलूदगी मुसलमानों के मुआशरे में बहुत आम हो गई है। इसको बदलने की तरफ़ पूरी तवज्जो देने की ज़रूरत है, क्योंकि क़ौमी और इन्फ़िरादी दोनों तरह से हालात ख़ुदा के इल्म व अख़्तियार के दायरे में हैं और उनमें कोई तब्दीली उसकी रज़ा के बग़ैर नहीं हो सकती है।

कामयाब इलेक्शन

मौलाना मुहम्मद वाज़ेह रशीद हसनी नदवी (रह0)

"जम्हूरी निज़ामे हुकूमत में इलेक्शन तश्कीले हुकूमत का वाहिद ज़रिया होता है, अगरचे उसके तरीक़ेकार और दायराकार में मुख़्तलिफ़ मुल्कों में वाज़ेह फ़र्क़ पाया जाता है, फिर भी वह जम्हूरी निज़ाम के लिए ख़्वाह उसका तरीक़ेकार और उसकी शक्ल किसी नवीय्यत की हो, लाज़मी शर्त है और किसी भी पार्ल्यामानी सियासी निज़ाम में उससे मुफ़िर नहीं, लेकिन अवाम की राय सिर्फ़ उसी इलेक्शन से जानी जा सकती है जो आज़ादाना माहौल में हो और हुकूमत की मदाख़लत या सरकारी दबाव से वह मुतास्सिर न हो और कोई आज़ाद इदारा उसका नज़्म करे, हुकूमत उसके निज़ाम में ग़ैरजानिबदार हो और उसके नताएज का एहतिराम किया जाए, ऐसी शक्ल में यही नताएज अवाम के मौक़िफ़ और क़ायम होने वाली हुकूमत के निज़ामे अमल और उनकी सियासत के बारे में रोशन पॉलिसी को वाज़ेह करते हैं।" (नया आलमी निज़ाम और हमः 132)

इल्मी दुनिया की सबसे बड़ी ख़िदमत

मौलाना जाफ़र मसऊद हसनी नदवी

आप माने या न माने यह दौर तालीम का है, इल्म हासिल करने का है, मदरसों और स्कूलों का है, कॉलिजों और यूनिवर्सिटियों का है, ट्यूशन और कोचिंग का है, बस्ते हैं कि फूलते जा रहे हैं, कांधे हैं कि उनके बोझ से झुकते जा रहे हैं, डोनेशन और फ़ीस ने बाप की कमर तोड़ दी, स्कूल की तैयारी ने मां की नींद उड़ा दी, होमवर्क की ज़्यादती ने मासूम तलबा के चेहरों से उनकी मुस्कुराहट छीन ली।

लेकिन एक सुनहरे मुस्तक़बिल की उम्मीद में मां–बाप को यह सब गवारा, आख़िर वह मुस्तक़बिल हाल में बदलता है, लेकिन अफ़सोस की तब तक मां–बाप के ख़्वाबों का वह शीशमहल चकनाचूर हो चुका होता है, बुढ़ापा है और एक लक़–ओ–दक़ मकान की हिफ़ाज़त का मसला है, साहबज़ादे जा चुके हैं आस्ट्रेलिया और साहिबज़ादी की रुख़्सती हो चुकी है केनेडा, रहे वह दोनों तो अब उनकी उम्र कहीं जाने की नहीं, आरज़ुएं तमाम दम तोड़ चुकी हैं, तमन्नाएं एक–एक करके सब रुख़्सत हो चुकी हैं, अब तो बस अपनी रुख़्सती का मंज़र निगाहों के सामने है, फ़िक्र है तो सिर्फ़ इस बात की कैसे होगा यह सफ़र, किसके कांधे पर होगा, ज़ादे सफ़र कहां से आएगा, रास्ते की ज़रूरतें कौन पूरी करेगा, मंज़िल तक पहुंचाने के फ़राएज़ कौन अंजाम देगा, मेरा बच्चा तो इस लायक़ नहीं, इस राह से वह वाक़िफ़ नहीं, कहां जाना है यह उसे पता नहीं, सफ़र की मुद्दत का उसे कुछ अंदाज़ा नहीं, रास्ते की वीरानी, मुसाफ़िर की तन्हाई और मुसाफ़त की दूरी का उसे कोई इल्म नहीं।

यह है मुस्तक़बिल उस निज़ामे तालीम व तरबियत का जिसके लिए इस वक़्त दुनिया दीवानी है, ऐसी दीवानी कि न तो उसे अक़ीदे की परवाह है, न अख़्लाक़ की फ़िक्र है, न इबादतों का ख़्याल है, न मामलों के बिगड़ने का एहसास है और न तौर–तरीक़ा बदलने से उसे कोई मलाल।

जिनका आख़िरत पर ईमान नहीं उनसे तो कुछ कहना ही नहीं लेकिन जो हज़रात आख़िरत पर यक़ीन रखते हैं और एक अब्दी ज़िन्दगी का तसव्वुर रखते हैं, उनसे कहने को ज़रूर यह दिल चाहता है कि वह निज़ामे तालीम व तरबियत जिसके पीछे आप अपना सबकुछ लड़ाने को तैयार हैं वह एक मख़्सूस मज़हब, एक मख़्सूस कल्चर और एक मख़्सूस तर्ज़े फ़िक्र की नुमाइन्दगी करता है, माद्दियत पर उसकी बुनियाद है, रूहानियत से वह बेज़ार है, क़ल्ब की दुनिया उसकी निगाहों से बिल्कुल ओझल है, सिर्फ़ माद्दी दुनिया है जो हमा वक़्त उसकी पेशे नज़र है, रही आख़िरत तो वह उसके यहां सिर्फ़ एक ख़्याल और एक अफ़साना है, तो क्या ऐसे निज़ामे तालीम को ज्यों का त्यों कुबूल कर लेना हमारे लिए, हमारे मुल्क के लिए और हमारी मिल्लत के लिए सूदमन्द हो सकता है?

हम मानते हैं और सिर्फ़ मानते ही नहीं यह अक़ीदा रखते हैं कि इस्लाम एक मुकम्मल निज़ामे ज़िन्दगी है, इसमें दुनिया भी है और आख़िरत भी, जिस्म भी है और रूह भी, कमाना भी और ख़र्च करना भी, इसमें रिआयत है फ़र्द की भी और अफ़राद के मजमूए की भी, इसमें अहमियत है ख़ानदान की भी और समाज और मुआशरे की भी, मर्द की भी और औरत की भी, वालिदैन की भी और पड़ोसियों की भी, यतीमों की भी और बेवाओं की भी, कमज़ोर और लाचारों की भी और ज़ईफ़ और नातवां बूढ़ों की भी, हत्ता कि इसमें हिदायात हैं मुआन्दीन व मुख़ालिफ़ीन के लिए भी और हुक़ूक़ हैं ग़ैरमुस्लिम हम वतन भाइयों के लिए भी।

इससे इनकार नहीं कि मग़्रिबी निज़ामें तालीम की ख़ूबियों को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता, मग़्रिब ने अपने इस निज़ामे तालीम की बदौलत साइंस, टेक्नालॉजी, सिनअत, हिर्फ़त, रियाज़ी, इन्जीनियरिंग, फ़लकियात, तबईयात और दूसरे उलूम व फुनून में कामयाबी की मंज़िलें तय कीं, ईजादात पर ईजादात कीं, चांद पर क़दम रखा, समन्दर की गहराइयां नापीं, फुतूहात पर फुतूहात हासिल कीं, यहां तक कि आज वह अपने इसी निज़ामे तालीम की बदौलत उस मंज़िल तक पहुंच गया कि उसने दुनिया को अपनी मुट्ठी में कर लिया लेकिन साथ–साथ उसने इन्सान को बहैसियत इन्सान के जीने से महरूम कर दिया, अमन को ग़ारत किया, सुकून को बर्बाद किया, ख़ानदानी निज़ाम को दरहम–बरहम किया, दिलों को मुहब्बतों से ख़ाली किया और उसकी शक्ल बदलकर

उसको एक तिजोरी बना दिया।

जिस्म की ज़रूरतों से किसको इनकार, आराम व राहत से किसको बैर, फ़र्द की अहमियत किसे तस्लीम नहीं, ज़ाती नफ़ा–नुक़सान की किसको फ़िक्र नहीं, दुनियावी तरक़्क़ी की तमन्ना किसके दिल में नहीं लेकिन रूह को नज़रअंदाज़ करके, आख़िरत को फ़रामोश करके, इन्सान की इन्सानियत को पामाल करके, समाजी तक़ाज़ों को पीठ पीछे डालकर, मां–बाप, रिश्तेदारों और पड़ोसियों से नाता तोड़कर सिर्फ़ अपनी ज़ात तक अपनी सोच के दायरे को महदूद कर लेना, यह तर्ज़े अमल जानवरों का तो हो सकता है किसी इन्सान का नहीं, जंगल में तो इस तरीक़े से रहा जा सकता है लेकिन इन्सानी आबादी में नहीं।

यक़ीनन हर क़ौम को ज़रूरत पड़ती है डॉक्टरों की, इन्जीनियरों की, साइसंदानों की, सिनअतकारों की, क़ानून दानों की, रियाज़ी के माहिरीन की और दूसरे उलूम व फ़ुनून में दस्तरस रखने वालों की, मुस्लिम मुआशरे को भी ऐसे लोगों की ज़रूरत है, लेकिन इस्लामी तालीमात के साथ, आला इन्सानी क़द्रों के साथ, हमदर्दी व ग़मख़्वारी के जज़्बे के साथ, दूसरों के दुख–दर्द के एहसास के साथ और यह चीज़ें पैदा होती हैं तो इस्लामी निज़ामें तालीम व तरबियत के मरहले से गुज़रकर।

हो सकता है कि मेरी इन बातों से आपको इत्तेफ़ाक़ न हो और यह भी हो सकता है कि आपकी ज़बान नही तो दिल ज़रूर कुछ इस तरह हो गया हो कि किस निज़ामें तालीम और तरबियत की आप बात करते हैं, वह निज़ामे तालीम जिसके परवरदह अश्ख़ास के पास दीन है न दुनिया, जन्नत–दोज़ख़ के तज़किरे तो बहुत करते हैं लेकिन न दोज़ख़ से बचने की कोशिश करते हैं न जन्नत में जाने की कोई फ़िक्र, दीन बेचते हैं और दुनिया ख़रीदते हैं, शोहरत व नामवरी के दिलदादा और किब्र व नख़्वत में डूबे हुए होते हैं, न उनके यहां क़नाअत है न तवक्कुल है, न जुहद है न इस्तग़्ना है, न ईसार है न हमदर्दी है और न तक़वा।

तो क्या ऐसी सूरत में उस निज़ामे तालीम व तरबियत से कोई अच्छी उम्मीद लगाई जा सकती है? जी हां! शर्त यह है कि आप उस निज़ाम से जुड़ें, ख़राबी निज़ाम की नहीं, दानिशगाहों की नहीं, तरबियती इदारों की नहीं, ख़ानक़ाहों और मदरसों की नहीं, निसाबे तालीम की नहीं, ख़राबी उन लोगों की है जो इस निज़ाम से जुड़ते हैं, लेकिन दुनियावी मक़सदों को पूरा करने के लिए और अपनी माद्दी ज़रूरतें पूरी करने के लिए, आप जुड़ें नियत की दुरुस्तगी के साथ, इख़्लास के जज़्बे के साथ, अमल के इरादे के साथ, फिर देखिये इन्सानियत की खेती कैसे लहलहाती है और इन्सानों को उनका खोया हुआ मक़ाम कैसे वापस मिलता है।

ज़रूरत आज पुराने–नये में तवाज़ुन पैदा करने और उनका सही इस्तेमाल करने की है, इल्म नया हो या पुराना, हर इल्म ख़ुदा का दिया हुआ है, हर इल्म ख़ुदा तक पहुंचाता है, हर इल्म अपने अन्दर इफ़ादियत रखता है, हर इल्म मुश्किलों में इन्सान की रहनुमाई करता है, शर्त यह है कि उसको रब के नाम के साथ हासिल किया जाए, ख़ुदा के तसव्वुर के साथ हो, जवाबदेही के एहसास के साथ हो।

जदीद कहे जाने वाले उलूम का अलमिया यह है कि ख़ालिक़े कायनात से उनका रब्त टूट गया है। इस्मे "रब" से उनका रिश्ता मुन्क़तअ हो गया है। क़दीम कहे जाने वाले उलूम का मसला यह है कि उनसे वाबस्ता अफ़राद का सबसे बड़ा सरमाया इख़्लास था, अब वही इख़्लास धीरे–धीरे उनकी ज़िन्दगियों से निकलता जा रहा है, मौलाना अबुल कलाम आज़ाद ने एक बार गांधी जी की कलकत्ता आमद के मौक़े पर मदरसा आलिया कलकत्ता के तलबा की तरफ़ से इशारा करते हुए कहा थाः गांधी जी, दुनिया में सिर्फ़ यही वह जमाअत है जो इल्म को बराए इल्म और बराए रज़ा–ए–इलाही हासिल करती है, लेकिन अफ़सोस की आज यह जमाअत भी अपना इम्तियाज़ खोती जा रही है और दुनिया की रंगीनियों में गुम होकर अपने माज़ी से अपना रिश्ता कमज़ोर कर रही है, नतीजा इसका यह है कि समाज के हर तबक़े को इसका नुक़सान उठाना पड़ रहा है।

इन्सान की एक बड़ी ग़लती यह है कि उसने इल्म को तक़द्दुस का दर्जा दे दिया है, उसने इल्म को ग़लती करने और धोखा खाने से मुबरा समझ लिया है, आज दुनिया का सारा बिगाड़ उसी तसव्वुर का नतीजा है, इल्म ग़लती करता है, धोखा खाता है, चूक उससे होती है, सिवाए इसके कि इल्म आसमानी तालीमात और हिदायात की रहनुमाई में अपना सफ़र तय करे और एहकामे इलाही का पाबन्द और उसका ताबेअ होकर अपना किरदार अदा करे।

आज ज़रूरत है जदीद उलूम को ख़ुदा के नाम से जोड़ने और क़दीम उलूम से वाबस्ता अफ़राद में इख़्लास पैदा करने और उनमें रज़ाए इलाही के जज़्बे को फ़रोग़ देने की, यही इस वक़्त इल्मी दुनिया की सबसे बड़ी ख़िदमत और इन्सानी दुनिया की अहम तरीन ज़रूरत है।

तक़्वा क्या है?

सैय्यद बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

तक़्वे के दुनियावी व उख़रवी फ़ायदेः

"और जो अल्लाह का लिहाज़ रखेगा अल्लाह उसको (मुश्किल से) निकलने का कोई रास्ता अता फ़रमा देगा और उसको बेशान व गुमान रिज़्क़ अता फ़रमाएगा।" (सूरह तलाक़: 2–3)

कुरआन मजीद की बहुत सी आयतों में तक़्वे के फ़ायदों का तज़किरा है, मज़कूरा आयत में भी तक़्वे के दो फ़ायदे बताए गए हैं; पहला यह कि अल्लाह तआला उसके नतीजे में रास्ता निकाल देगा और दूसरा यह कि अल्लाह उसको ऐसी जगह से रिज़्क़ अता फ़रमाएगा जहां से उसको गुमान भी न होगा।

आदमी के तक़्वे की ज़िन्दगी अख़्तियार करने के नतीजे में अल्लाह की तरफ़ से आसानी पैदा करने का तज़किरा एक दूसरी जगह यूं इरशाद हैः

"और जो अल्लाह का लिहाज़ रखेगा अल्लाह उसके लिए उसके काम को आसान फ़रमा देगा।"

कुरआन मजीद की आयतों से पता चलता है कि तक़्वे की ज़िन्दगी के आख़िरत के फ़ायदे के अलावा दुनियावी ज़िन्दगी में भी बहुत से फ़ायदे हैं और जिस तरह "तक़्वा" आख़िरत की कामयाबी का एक रास्ता है, उसी तरह यह दुनियावी मसलों का हल भी है, अल्लाह तआला ने तक़्वे के अन्दर दुनिया की मुसीबतों और मुश्किलों का हल रखा है, इसीलिए अगर आदमी तक़्वे की सही ज़िन्दगी अख़्तियार कर ले तो अल्लाह तआला उसके लिए काफ़ी हो जाता है और उसकी दुनियावी परेशानियों को दूर कर देता है, रिज़्क़ की तंगी को दूर कर देता है और उसके लिए हर तरह की सहूलतें पैदा कर देता है।

हमारे सामने जो मुसीबतें और मुश्किलें आती हैं और उनकी वजह से कई बार हमें सख़्त इम्तिहान से गुज़रना पड़ता है, आज भी पूरी इन्सानियत और ख़ास तौर से ईमान वाले जिन मुसीबतों से गुज़र रहे हैं वह सबके सामने हैं, इससे यह बात साफ़ हो जाती है कि अगर हमें इन मुसीबतों का हल तलाश करना है तो हमें मुकम्मल तक़्वे की ज़िन्दगी अख़्तियार करनी पड़ेगी यानि हमारी ज़ाहिरी ज़िन्दगी भी शरीअत के मुताबिक़ हो और बातिनी ज़िन्दगी भी। इसी के साथ हमारे अन्दर अल्लाह से ताल्लुक़ और अल्लाह की रज़ा का जज़्बा भी बुनियादी तौर पर मौजूद हो। जब यह बातें पैदा हो जाती हैं तो ज़ाहिरी आमाल के अन्दर ताक़त पैदा होती है, इसीलिए अगर तक़्वे का यह मिज़ाज पैदा हो जाएगा तो अल्लाह हमारी मुसीबतों और मुश्किलों को हल कर देगा और उन्हें दूर कर देगा।

मसलों का हलः

मौजूदा दौर का एक बड़ा अलमिया यह है कि हम अपनी मुश्किलों का हल दुनिया के तमाम वसाएल में तलाश करते हैं, लेकिन हमारी तवज्जो उस चीज़ की तरफ़ नहीं जाती जो हमारे ख़ालिक़ ने हमें बताई है, जो हमें पैदा करने वाला है और हमारी नफ़्सियात को भी वही बनाने वाला है और वही हमारा पूरा निज़ाम चला रहा है और वही हमारी हर–हर चीज़ से वाक़िफ़ है। हमारा वह ख़ालिक़ हमसे यह बात कह रहा है कि तक़्वे की ज़िन्दगी अख़्तियार करना तमाम मसलों का हल है, इसी के ज़रिये से अल्लाह रास्ता निकालेगा, लेकिन कई बार हमें यह लगता है कि अब क्या होगा और अब रास्ते कैसे निकलेंगे? अब तो लोग भूखों मर रहे हैं, फ़ाक़ों की नौबत आ गई और इसके अलावा न जाने क्या–क्या मुश्किलें हैं? याद रखिये! यह सारी मुश्किलें अपनी जगह पर हैं, लेकिन जब इज्तिमाई तौर पर तक़्वे की ज़िन्दगी अख़्तियार करने की कोशिश की जाएगी तो अल्लाह की इज्तिमाई मदद आएगी।

तक़वे की इन्फ़िराद्दी और इज्तिमाई ज़िन्दगी:

यह बात समझने की ज़रूरत है कि अगर इन्फ़िरादी तौर पर तक़वा अख़्तियार किया जाए तो अल्लाह की मदद इन्फ़िरादी तौर पर होती है लेकिन उसके अन्दर कभी कभी ऐसा होता है कि जब अज़ाब की शक्लें आती हैं तो ऐसी सूरत में अल्लाह तआला बाज़ मर्तबा उन लोगों को भी मुब्तिला कर देता है जो मुत्तक़ी होते हैं, मसल मशहूर है कि जब गेहूं पीसा जाता है तो उसके साथ घुन भी पिस जाता है। इसीलिए इन्फ़िरादी तौर पर तक़वा की ज़िन्दगी बाज़ मर्तबा मुमकिन है कि मुसीबतों का सामना करना पड़े लेकिन अगर इज्तिमाई तौर पर तक़वे की ज़िन्दगी अख़्तियार की जाए और इज्तिमाई तौर पर अल्लाह को राज़ी करने वाली ज़िन्दगी अख़्तियार की जाए तो अन्दर व बाहर दोनों हैसियतों से मेहनत हो तो फिर ऐसी सूरत में अल्लाह की मदद आती है।

बातिन मर्ज़:

हमारा एक अजीब मिज़ाज है कि हम अपने ज़ाहिरी आमाल पर बाज़ मर्तबा बड़ी मेहनत करते हैं और बाज़ मर्तबा उसके अन्दर बहुत तसन्नो भी अख़्तियार कर लिया जाता है लेकिन अन्दर दिल पर जो जंग लगा हुआ है उस पर तवज्जो नहीं होती नतीजा यह है कि रियाकारी होती है, अजब होता है, बड़ाई का एहसास होता है, अपनी बड़ाई और बुज़ुर्गी का मुज़ाहिरा किया जाता है, उसके चर्चे किये जाते हैं, उसके असबाब अख़्तियार किये जाते हैं और कम से कम उसके लिए झूठ और मुबाल्ग़े का सहारा लिया जाता है, उसके लिए कभी–कभी झूठे ख़्वाब भी बयान कर दिये जाते हैं, या बयान करा दिये जाते हैं, वाक़्या यह है कि हमारी यह वह अन्दरूनी बीमारियां हैं जो हमारे लिए बहुत ही ख़तरनाक हैं।

इज्तिमाई तौर पर तक़वे की ज़िन्दगी अख़्तियार करने के नतीजे में अल्लाह की मदद आती है, अल्लाह का इरशाद है:

{وَمَن يَتَّقِ اللَّهَ يَجْعَل لَّهُ مَخْرَجاً} "और जो अल्लाह का लिहाज़ रखेगा उसको अल्लाह (मुश्किल से) निकलने का कोई रास्ता अता फ़रमा देगा।"

ज़ाहिर है कि अल्लाह तबारक व तआला मसाएल का इज्तिमाई रास्ता तब निकालेगा जब इज्तिमाई तौर पर तक़वे की ज़िन्दगी अख़्तियार की जाएगी। जब एक कारोबारी अपने कारोबार में सोचेगा, एक काश्तकार अपनी काश्तकारी में सोचेगा, एक मुदर्रिस जो दीनी तालीम देता है, उसमें सोचेगा कि हमारे पढ़ाने की नियत क्या है? आज हम दुनियादारों के बारे में क्या कहें, अफ़सोस की बात है कि हम जैसे लोग जिनको दीनदार समझा जाता है, अगर हम अपना जाएज़ा लें तो हमारे अन्दर कितनी ख़ामियां हैं। हम मदरसे में पढ़ा रहे हैं, लेकिन हमारे अन्दर यह ख़्याल नहीं होता कि हम यह काम अल्लाह की रज़ा के लिए कर रहे हैं, अल्लाह का दीन पढ़ा रहे हैं, अल्लाह के नबी (स0अ0व0) की बातें पढ़ा रहे हैं, अल्लाह हमसे राज़ी होगा, बल्कि हमारा मक़सद यह होता है कि हमारे पढ़ाने से हमारी इज़्ज़त में इज़ाफ़ा होगा, इसीलिए अगर कोई बुख़ारी पढ़ा रहा हो और उससे बुख़ारी लेकर तिरमिज़ी दे दी जाए तो वह नाराज़ हो जाएगा हालांकि इसमें नाराज़ होने की कोई बात नहीं है, आप बुख़ारी पढ़ा रहे थे जो अल्लाह के नबी (स0अ0व0) का कलाम है, अब तिरमिज़ी दे दी गई है वह भी अल्लाह के नबी (स0अ0व0) ही का कलाम है तो इसमें नाराज़ होने की क्या बात है? बात अस्ल यह है कि अल्लाह के नबी (स0अ0व0) का कलाम पढ़ाना मक़सूद नहीं बल्कि बुख़ारी पढ़ाना गोया एक इज़्ज़त वाली बात है और इसी इज़्ज़त के हुसूल के लिए आदमी बुख़ारी पढ़ा रहा है।

मशहूर वाक़्या है कि हज़रत मौलाना रशीद अहमद गंगोही (रह0) के एक मुरीद किसी मदरसे में बुख़ारी पढ़ाते थे, बहुत अर्से तक वह हज़रत की ख़िदमत में आते रहे मगर हर मर्तबा यही कहते कि हज़रत! फ़ायदा नहीं होता। एक मर्तबा हज़रत गंगोही (रह0) ने उन्हें हज़रत हाजी इमदादुल्लाह मुहाजिर मक्की (रह0) की ख़िदमत में भेजा, जब वह वहां गए तो हाजी साहब (रह0) ने बरजस्ता पूछा कि आप क्या करते हैं? उन्होंने बड़े फ़ख़्र से बताया कि मैं बुख़ारी पढ़ाता हूं। हज़रत हाजी साहब ने फ़रमाया: क्या तुम अपनी इस्लाह की ग़रज़ से आए हो? उन्होंने कहा: हां! इतनी दूर से सफ़र करके मैं इसीलिए हाज़िर हुआ हूं। फ़रमाया: बुख़ारी पढ़ाना छोड़

दो। यह बात अगरचे दुश्वार हुई मगर वह सच्चे तालिब थे, इसलिए उन्होंने बुख़ारी पढ़ाने से माज़रत कर ली, इसके बाद कुछ ही अर्सा गुज़रा था कि उनके ऊपर ज़िक्र के आसार ज़ाहिर हुए और उन्हें अल्लाह का कुर्ब महसूस होने लगा। फिर अर्ज़ किया: हज़रत इतने दिन वहां क़याम किया मगर वह फ़ायदा महसूस नहीं हुआ जो आपकी ख़िदमत में हाज़िर होने के बाद महसूस हुआ। हज़रत हाजी साहब (रह0) ने फ़रमाया: यह मामला किसी जगह का नहीं, मसला सिर्फ़ इतना था कि तुम्हारे अन्दर बुख़ारी पढ़ाने का ग़ुरूर था और वह ग़ुरूर मानेअ था, इसीलिए ज़िक्र का कोई फ़ायदा नहीं होता था, ज बवह मानेअ रास्ते से हट गया तो फ़ायदा हो गया।

सच्ची बात यह है कि तक़वे का मतलब सिर्फ़ जुब्बा व दस्तार और शानदार अमामा नहीं है, तक़वा यह नहीं है कि आदमी तक़रीर कर रहा है या तलबा को पढ़ा रहा है और लोग उसकी सलाहियत पर अश–अश कर रहे हैं, तक़वा यह नहीं कि वह लोगों को ख़ूब रुला रहा है और ख़ुद भी रो रहा है। वाक़्या यह है कि यह सब चीज़ें अल्लाह तआला के यहां अस्लन मोतबर नहीं हैं, जब तक कि उसका असर दिल पर न हो और आदमी यह सब चीज़ें अल्लाह के लिए न करे, अल्लाह माफ़ करे कभी कभी तो रोना–रुलाना भी अपनी इज़्ज़त के लिए होता है, अगर ख़ुदा न ख़्वास्ता हमारे अन्दर यह बात है तो हमारे यह सारे काम बिल्कुल बेहक़ीक़त हैं और अल्लाह के यहां उनकी कोई क़ीमत नहीं, चाहे दुनिया में उसके कुछ फ़ायदे नज़र आते हों, लेकिन अल्लाह के यहां उसका कोई फ़ायदा नहीं है।

आदमी के अन्दर तक़वे का अस्ल मिज़ाज जब ही बनेगा जब उसकी मुकम्मल ज़िन्दगी अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ और अल्लाह के नबी (स0अ0व0) के दिये हुए निज़ाम के मुताबिक़ हो। अगर यह मिज़ाज इज्तिमाई तौर पर बन जाए तो मैं क़सम खाकर कहूं तो हानिस नहीं होऊंगा कि आज जो मुसीबतें और मुश्किलें हैं, यह सारी मुसीबतें इंशाअल्लाह एकदम से ख़त्म हो जांएगी। अल्लाह तआला का साफ़ इरशाद है:

{وَمَن يَتَّقِ اللَّهَ يَجْعَل لَّهُ مَخْرَجاً} "और जो अल्लाह का लिहाज़ रखेगा अल्लाह उसको (मुश्किल से) निकलने का कोई रास्ता अता फ़रमा देगा।"

तक़वा का एक अहम फ़ायदा:

तक़वे की ज़िन्दगी का एक फ़ायदा यह भी बताया गया है कि अल्लाह आदमी को ऐसी जगह से रिज़्क़ देगा जहां से उसको शान व गुमान भी न होगा। रिज़्क़ का दायरा बहुत वसीअ है; रिज़्क़ खाने का भी, रिज़्क़ लिबास का भी, रिज़्क़ इल्म का भी, रिज़्क़ बरकतों का भी और रिज़्क़ रूहानियत का भी, इन सारी चीज़ों का ताल्लुक़ रिज़्क़ से है, उनमें से हमें बहुत से ज़ाहिरी असबाब नज़र नहीं आते लेकिन हक़ीक़त में यह सब चीज़ें अल्लाह की तरफ़ से ही मिलती हैं।

क़ौमी मसलों का हल

हज़रत मौलाना मुहम्मदुल हसनी (रह०)

"आज हमारा मुआशरा जिन मुसीबतों में मुब्तिला है उसका ताल्लुक़ न ग़िज़ा और लिबास है, न जिस्मानी सेहत से, न तन्हा दिमाग़ से। यह मुसीबतें इस दिल की पैदा की हुई हैं जिसमें ख़ुदा का ख़ौफ़ नहीं रहा, उसकी मख़्लूक़ पर शफ़क़त नहीं रही, इन्सानियत के लिए दिलसोज़ी नहीं रही, ख़ालिस ख़ुदा की ख़ुशनूदी के लिए काम करने का जज़्बा और हौसला नहीं रहा। यह वह अस्ल चूल है जो अपनी जगह से खिसक गई है।

आज हमारे क़ौमी मसाएल का हल ईमानदारी और किरदार की मज़बूती में छिपा हुआ है, लेकिन यह किरदार दिल की तब्दीली और नियत और इरादे की तब्दीली के बग़ैर पैदा नहीं हो सकता, यह बदक़िस्मती है। यही वह चीज़ है जिसकी तरफ़ आज कम से कम तवज्जो की जा रही है, इसका नतीजा यह है कि हमारी हर तदबीर उल्टी पड़ रही है और हर तामीर तख़रीब पैदा कर रही है। इस मुल्क के बहीख़्वाहों, अपने दोस्तों और बिरादराने वतन से अदब के साथ अर्ज़ करूंगा कि किरदारसाज़ी जैसे अहम बुनियादी और फ़ौरी काम की तरफ़ तवज्जे करें। इसलिए कि अगर इस काम की तरफ़ पूरी तवज्जो कर ली गई तो न सिर्फ़ हमारे यह मन्सूबे कारामद साबित होंगे बल्कि उनसे हैरतअंगेज़ और ख़ुशकुन नताएज ज़ाहिर होंगे जिनकी हमें इस वक़्त तवक्को भी नहीं है।" (जाद-ओ-फ़िक्र-ओ-अमल: ४७-४६)

तलाक के चन्द मसाएल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

जिस औरत को हैज़ न आता हो उसको तलाक़–ए–हसन देने का तरीक़ा:

जिस औरत को हैज़ न आता हो चाहे नाबालिग़ होने की वजह से या बुढ़ापे की वजह से या बीमारी के सबब बालिग़ होने पर भी हैज़ नहीं आता तो अगर उसको तलाक़ सुन्नत के तरीक़े पर तलाक़ देना चाहता है तो उसका तरीक़ा यह है कि एक तलाक़ दे दे, फिर जब एक महीना गुज़र जाए तो दूसरी तलाक़ दे दे, फिर जब एक महीना गुज़र जाए तो तीसरी तलाक़ दे दे, फिर अगर चांद के महीने की पहली तारीख़ को तलाक़ दी हो तो चांद के एतबार से महीने का शुमार किया जाएगा, चाहे 29 का हो या 30 का और अगर महीने के दरमियान तलाक़ दी है तो हर महीना तीस दिन का शुमार किया जाएगा, यही हुक्म उस वक़्त होगा जब किसी हामिला औरत को तलाक़ देना चाहे लेकिन बेहतर तरीक़ा यह है कि उन औरतों को भी सिर्फ़ एक तलाक़ दे दी जाए, फिर जब तीन महीने गुज़र जाएंगे तो इद्दत ख़त्म हो जाएगी। (शामी: 2/453)

जिस औरत को हैज़ नहीं आता है चाहे कम उम्र की वजह से या बुढ़ापे की वजह से या हमल की वजह से उसको वती के बाद तलाक़ दी जा सकती है, अलबत्ता बेहतर यह होगा कि वती के एक माह बाद तलाक़ दे ताकि तमाम अइम्मा के नज़दीक कराहत से बच सके।

(फ़तेहुल क़दीर: 3/335)

ग़ैर मद्दख़ूल बहा को तलाक़:

ग़ैर मदख़ूल बहा औरत जिसकी रुख़्सती नहीं हुई या रुख़्सती हुई लेकिन ख़लवत–ए–सहीहा नहीं हुई तो उसको तलाक़े हसन देने का तरीक़ा मौजूद नहीं है इसलिए कि जैसे ही एक तलाक़ देगा वह बाइना हो जाएगी फिर मज़ीद तलाक़ देने की गुंजाइश नहीं रहेगी और अगर एक कलिमे से तीन तलाक़ दे और कहे कि तुम्हें तीन तलाक़ तो यह बिदई तलाक़ होगी यानि तलाक़ पड़ जाएगी लेकिन वह गुनाहगार होगा और उस औरत को हालते हैज़ में तलाक़ दी जा सकती है यह तलाक़ बिदअत नहीं होगी लेकिन बेहतर होगा कि पाकी की हालत ही में तलाक़ दी जाए।

(हिदाया व फ़तेहुल क़दीर: 3/333)

तलाक़ के मुतफ़र्रिक़ मसाएल

जबरी तलाक़:

अगर शौहर से इकराह (ज़बरदस्ती, मजबूर) करके ज़बानी तलाक़ के अल्फ़ाज़ कहलवाए जाएं तो तलाक़ वाक़ेअ हो जाएगी लेकिन अगर इकराह के साथ ज़बानी तलाक़ के अल्फ़ाज़ कहलवाने के बजाए लिखवाए जाएं तो अगर तलाक़ न लिखने पर जान से मारने या किसी अज़ू को तल्फ़ करने या सख़्त पिटाई करने की धमकी दी जाए और मजबूर करने वाला इन चीज़ों पर क़ुरदत रखता हो और शौहर को अंदेशा हो कि अगर उसके उसकी बात नहीं मानी तो यह ऐसा कर गुज़रेगा लिहाज़ा उसने तलाक़ लिखकर दे दी लेकिन ज़बान से तलाक़ के अल्फ़ाज़ अदा नहीं किये तो तलाक़ वाक़ेअ नहीं होगी। (शामी: 2/456)

और अगर मजबूर करने पर तलाक़ का इरादा किये बग़ैर और बीवी का नाम लिए या उसकी तरफ़ इशारा किये बग़ैर और उसको मुख़ातिब किये बग़ैर सिर्फ़ "तलाक़–तलाक़" कह दिया तो तलाक़ नहीं पड़ेगी लेकिन अगर तुम को तलाक़, मेरी बीवी को तलाक़ या बीवी की तरफ़ इशारा करके उसको तलाक़ या नाम लेकर फ़लां को तलाक़ कहा तो ख़्वाह इकराह के साथ कहे तलाक़ पड़ जाएगी। (शामी: 2/466)

मज़ाक़ में तलाक़:

तलाक़ उन तीन चीज़ों में से एक है जो मज़ाक़ में

कहने से भी वाक़ेअ हो जाती है, इसीलिए हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि0) से मरवी है कि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमाया: "ثلاث جدهن جد وهزلهن جد: النكاح والطلاق والرجعة." "तीन तलाक़ों को संजीदगी से कहना भी संजीदगी है और मज़ाक़ में कहना भी संजीदगी है, निकाह, तलाक़ रुजअत।" (तिरमिज़ी: 1184)

लिहाज़ा अगर हंसी मज़ाक़ में भी तलाक़ दी जाए तो वाक़ेअ हो जाती है। (हिन्दिया: 1/353)

नाबालिग़ की तलाक़:

अगर किसी बच्चे का निकाह बचपन में कर दिया गया तो जब तक वह बालिग़ न हो जाए उसकी तलाक़ वाक़ेअ नहीं होगी, चाहे वह बाशऊर ही क्यों न हो, इसी तरह उसका वली (बाप–भाई वग़ैरह) भी उसकी तरफ़ से उसकी बीवी को तलाक़ नहीं दे सकते। (शामी: 2/462)

पागल की तलाक़:

मजनून की तलाक़ वाक़ेअ नहीं होती, लेकिन अगर किसी की कैफ़ियत यह है कि कभी बहकी बहकी बातें करता है और कभी ठीक रहता है तो जब मुख़्तलुल हवास रहने की हालत में तलाक़ देगा तो वाक़ेअ नहीं होगी और जब सही होने की हालत में तलाक़ देगा तो वाक़ेअ हो जाएगी। (हिन्दिया: 1/353)

इसलिए कि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमाया: "हर तलाक़ पड़ जाएगी सिवाय उस मुख़्तलुल हवास की तलाक़ के जो मग़लूबुल अक़्ल हो।" (तिरमिज़ी: 1191)

बेहोश और सोते शख़्स की तलाक़:

अगर कोई शख़्स बेहोशी की हालत में या सोते हुए तलाक़ के अल्फ़ाज़ मुंह से निकाले तो उसकी तलाक़ वाक़ेअ नहीं होगी। (हिन्दिया: 1/353)

इसीलिए रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमाया कि तीन लोगों से क़लम को उठा लिया गया है (यानि उनके अल्फ़ाज़ ग़ैरमोतबर हैं) सोते शख़्स से यहां तक कि वह बेदार हो जाए, नाबालिग़ से यहां तक कि वह बालिग़ हो जाए और मजनून से यहां तक कि वह सेहतयाब हो जाए।

नशे में तलाक़:

अगर कोई शख़्स जानबूझ कर किसी नशेवाली चीज़ का इस्तेमाल करे और नशा बहुत ज़्यादा न हो, हवास क़ायम हों तो अगर इस हालत में तलाक़ दे तो बिलइत्तिफ़ाक़ तलाक़ वाक़ेअ हो जाएगी लेकिन अगर नशा बहुत ज़्यादा हो जाए, यहां तक कि औल–फ़ौल बकने लग जाए और उसे अपने ऊपर क़ाबू न रहे तो मुफ़्ता बिही क़ौल के मुताबिक़ इस सूरतेहाल में भी तलाक़ देने से वाक़ेअ हो जाएगी और यह तलाक़ सज़ा के तौर पर वाक़ेअ होगी, लेकिन मशाएख़े अहनाफ़ में से बाज़ (इमाम तहावी और करख़ी) का क़ौल यह है कि उसकी तलाक़ वाक़ेअ नहीं होगी। साहिबे अलरद्दुल मुख़्तार ने फ़तावा तातारख़ानिया के हवाले से इस पर फ़तवा होने का ज़िक्र किया है, लेकिन अल्लामा शामी ने इसको तमाम कुतुबे फ़िक़्ह के ख़िलाफ़ क़रार दिया है, यह मसला फ़िक़ एकेडमी इण्डिया के एक इजलास में भी ज़ेरे बहस आया था, लेकिन इस पर कोई इत्तेफ़ाक़ नहीं हो सका, इसलिए इस तरह का मसला पेश आने पर किसी अच्छे साहिबे इल्म की तरफ़ रुजुअ करना चाहिए। (शामी: 2/460, हिन्दिया: 1/353)

लेकिन अगर किसी को ज़बरदस्ती शराब पिला दी गई या उसने दवा के तौर पर मजबूरी की हालत में किसी नशावर दवा का इस्तेमाल किया और नशा चढ़ गया और इस हालत में उसने तलाक़ के अल्फ़ाज़ निकाल दिये तो तलाक़ वाक़ेअ नहीं होगी।

(शामी: 2/460)

ऊपर जो हुक्म शराब का लिखा गया है सही क़ौल के मुताबिक़ यही तमाम एहकाम हर तरह की शराब के अलावा किसी भी तरह की नशावर चीज़ जैसे भांग, अफ़यून, चरस और आज के ज़माने में राएज दूसरे ड्रग्स का भी होगा। (शामी: 2/460)

ग़ुस्से की तलाक़:

ग़ुस्से की हालत में तलाक़ वाक़ेअ हो जाती है (बल्कि लोग अक्सर ग़ुस्से में ही तलाक़ देते हैं जबकि तलाक़ का क़दम बहुत सोच–समझकर नार्मल हालत में करना चाहिए) लेकिन अगर ग़ुस्सा इतना बढ़ जाए कि जुनून की कैफ़ियत हो जाए और ब्लड प्रेशर बढ़ने या किसी और सबब से उसको उसी तरह अपने ऊपर क़ाबू न रहे जैसे मजनून को अपने ऊपर क़ाबू नहीं रहता है तो उस हालत का जुनून की हालत पर क़यास करते हुए तलाक़ वाक़ेअ नहीं होगी। (शामी: 2/463)

शरीअत-ए-मुहम्मदी (स०अ०व०)

दाएमी राह-ए-निजात

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

{قُولُوا آمَنَّا بِاللَّهِ وَمَا أُنزِلَ إِلَيْنَا وَمَا أُنزِلَ إِلَىٰ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ وَإِسْحَاقَ وَيَعْقُوبَ وَالْأَسْبَاطِ وَمَا أُوتِيَ مُوسَىٰ وَعِيسَىٰ وَمَا أُوتِيَ النَّبِيُّونَ مِن رَّبِّهِمْ لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ أَحَدٍ مِّنْهُمْ وَنَحْنُ لَهُ مُسْلِمُونَ}

"कहो; हम अल्लाह पर ईमान लाए और जो कुछ हम पर उतारा गया और जो कुछ इब्राहीम व इस्माईल, इस्हाक़ व याकूब और औलादे याकूब पर उतारा गया और जो कुछ मूसा और ईसा को दिया गया, सब पर ईमान रखते हैं, इसी तरह तमाम अम्बिया को उनके रब की तरफ़ से जो कुछ मिला सब पर ईमान रखते हैं, हम उनमें से किसी एक के दरमियान भी फ़र्क़ नहीं करते और हम अल्लाह के पूरे–पूरे फ़रमा बरदार हैं।" (सूरह बक़राः 136)

रसूल–ए–अकरम (स०अ०व०) ने जब अपनी दावत पेश फ़रमाई तो तमाम अहले मज़ाहिब ने इस दावत को अपने लिए ख़तरा समझा और आपके लाए हुए दीन को एक नया ईजाद करदा दीन समझा, बाज़ लोगों पर यह ख़तरा महसूस हुआ कि शायद यह किसी को उठाने और किसी को गिराने की साज़िश है, लोग तरह–तरह के अंदाज़े लगाने लगे, ख़ुद अल्लाह का इरशाद हैः

{إِنَّكُمْ لَفِي قَوْلٍ مُّخْتَلِفٍ}

"तुम मुख़्तलिफ़ बातों में पड़ गए हो।"

मुश्रिकीन यह कहते हुए उठे;

{أَنِ امْشُوا وَاصْبِرُوا عَلَىٰ آلِهَتِكُمْ إِنَّ هَٰذَا لَشَيْءٌ يُرَادُ ۝ مَا سَمِعْنَا بِهَٰذَا فِي الْمِلَّةِ الْآخِرَةِ}

"चलो चलो अपने माबूदों पर डट जाओ, इस दावत में कोई ग़रज़ पोशीदा मालूम होती है, हमने ऐसी बात किसी और मिल्लत में नहीं सुनी, यह तो बस एक मनगढ़ंत बात मालूम होती है।"

यहूदियों ने कहाः

"हमारे दिल महफ़ूज़ हैं।"

यानि हमें इसकी ज़रूरत नहीं और नसारा ने भी कटजहती की।

मज़कूरा आयात में ऐलाने आम करवाया जा रहा है कि यह मुबारक दावत किसी को गिराने या उठाने के लिए नहीं है यह किसी से मुक़ाबले के लिए भी नहीं है यह एक पैग़ामे हक़ है। यह तमाम अम्बिया की सदा है जो रसूलुल्लाह (स०अ०व०) की आवाज़ की शक्ल में बुलन्द की जा रही है। यह हर नबी के पैग़ाम की ताईद के लिए लगाई जाने वाली सदा है। ईमान हमारा इब्राहीम से लेकर ईसा मसीह तक सब पर है। किसी के दरमियान नुबूव्वत व रिसालत में फ़र्क़ के हम क़ायल नहीं। यह एक साफ़ हक़ीक़त है जिसे मानने की तुम्हें दावत दी जा रही है। तमाम अम्बिया और उनकी तालीमात पर उतरी हुई किताबें सब बरहक़ और सब सर आंखों पर। इन्हीं तालीमात का खुलासा इस दावत में मौजूद है फिर लड़ाई किस बात की।

इसी तरह चूंकि रसूलुल्लाह (स०अ०व०) की शरीअत ने तमाम साबिक़ा शरीअतों को मन्सूख़ कर दिया, इसे भी यहूद व नसारा ने अपनी–अपनी शरीअत की तौहीन समझा। इस आयत में इसका भी जवाब है कि मुहम्मद रसूलुल्लाह (स०अ०व०) शरीअत को शरीअत से टकराने के लिए नहीं आए, न किताब को किताब से लड़ाने के लिए तशरीफ़ लाए है। आप अल्लाह के फ़ैसलों को नाफ़िज़ करने के लिए हैं। किसी शरीअत का मन्सूख़ किया जाना उसकी तौहीन नहीं बल्कि अल्लाह की हिकमत है। अल्लाह अपनी किसी किताब को या शरीअत को मन्सूख़ करके कोई

दूसरी किताब और शरीअत नाज़िल करे तो उससे साबिक़ा किबात और शरीअत के तक़द्दुस पर कोई हर्फ़ नहीं आता। अल्लाह की उतारी हुई हर किताब लायके सद हज़ार तकरीम और उसकी जारी करदा हर शरीअत हज़ार दफ़ा सर आंखों पर, इसलिए अल्लाह ने जिस नबी पर जिस वक़्त जो भी उतारा मूसा व ईसा को जो कुछ नसीब हुआ, हर–हर नबी को उस दरबार से जो कुछ भी अता हुआ हम सब पर ईमान रखते हैं और दिल खोलकर उसे सराहते हैं। हम किसी नबी में तफ़रीक़ नहीं करते हैं, अलबत्ता हमारी पूरी–पूरी फ़रमाबरदारी अल्लाह के लिए हैं। हम अल्लाह की जारी करदा तमाम शरीअतों पर सर आंखों पर रखते हुए इस आख़िरी शरीअत को अपने दाएमी राहे निजात तसव्वुर करते हैं। इसलिए कि अल्लाह की मर्ज़ी यही है कि यह शरीअत ता अबद जारी हो जाए, इसमें मुक़ाबला आराई का क्या सवाल, यह तो हुक्मे इलाही की सच्ची ताबेअदारी है। यह उस पूरी आयत के मुतालबे का खुलासा है, जिसने हर चीज़ को इन्तिहाई साफ़–साफ़ वाज़ेअ कर दिया है। उसके बाद अल्लाह की तरफ़ से यह ऐलान हुआ कि:

{فَإِنْ آمَنُوا بِمِثْلِ مَا آمَنتُم بِهِ فَقَدِ اهْتَدَوا وَّإِن تَوَلَّوْا فَإِنَّمَا هُمْ فِي شِقَاقٍ فَسَيَكْفِيكَهُمُ اللهُ وَهُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ}

"ऐ मोमिनो! तुम्हारी तरह यह भी वैसे ही ईमान लाएं तो इनके हिदायत याफ़्ता होने में कोई शुब्हा नहीं, अगर इस क़द्र साफ़ बात सुनकर भी यह मुंह फेरें तो समझ लो कि यह तुम पे अपनी (ख़ुद साख़्ता) दुश्मनी निकालना चाह रहे हैं, तो इन सबसे निपटने के लिए आपके वास्ते अल्लाह काफ़ी है, वह सब सुन रहा है जान रहा है।"

قولوا آمنا بالله इस आयत से यह भी मालूम हुआ कि जिस शख़्सियत का नबी होना मालूम हो उनपर नाम की ताईन के साथ ईमान रखा जाए बक़िया तमाम अम्बिया पर इज्मालन ईमान काफ़ी है, बहुत से यहूदियों ने रसूलुल्लाह (स0अ0व0) से पूछा था कि कि किन अम्बिया पर ईमान रखा जाए, इस आयत में इसका भी जवाब मौजूद है यानि अल्लाह ने जिस किसी को नबी बनाया उस पर हम ईमान रखते हैं, यह वैसे ही जैसे अल्लाह तआला ने हर किताब पर ईमान रखने का हुक्म दिया है।

قل آمنت بما أنزل الله من كتاب; कहिए अल्लाह ने जो भी किताब उतारी मेरा उस पर ईमान है।

الأسباط; औलादे याकूब को **أسباط** कहते हैं, यह बारह थे, जिनसे बारह बड़े–बड़े क़बीले वजूद में आए, **أسباط** का मुफ़रिद **سِبْطٌ** है, बनी इस्राईल में सब्त की वही हैसियत है जो बनी इस्माईल में क़बीले की है। मुसलसल ततबअ को सब्त कहते हैं, चूंकि औलादे याकूब लगातार फैलती चली गईं, इसलिए उनको अस्बात कहा गया, अस्बात से मुराद मख़्सूस जमाअत नहीं बल्कि हज़रत याकूब की कुल नस्ल को अस्बात कहते हैं। इस लिहाज़ से अलअस्बात से मुराद नस्ले याकूब में पैदा होने वाले तमाम अम्बिया मुराद हैं। बाज़ हज़रात ने हज़रत यूसुफ़ के बक़िया भाइयों को भी नबी बताया है इसलिए कि वह सब अलअस्बात थे, लेकिन यह क़ौल इन्तिहाई ज़ईफ़ है, यहां मुराद हज़रत याकूब की ख़ास सल्बी औलाद नहीं बल्कि आपके ज़रिये चली हुई नस्ल मुराद है।

لا نفرق بين أحد منهم तारीज़ है यहूद पर जो यह कहते थे:

{نُؤْمِنُ بِبَعْضٍ وَنَكْفُرُ بِبَعْضٍ} "हम बाज़ को मानते हैं और बाज़ का इनकार करते हैं।"

आयत ने बता दिया कि सिलसिला–ए–नुबूव्वत इन्तिहाई मज़बूत व मरबूत सिलसिला है, इसकी किसी भी कड़ी का इनकार करना गोया कुल सिलसिले को न मानना है। अम्बिया, रसूल को एक दूसरे से जुदा करके देखा नहीं जा सकता, किसी एक नबी की बेहुरमती और बेअदबी कुल सिलसिला–ए–नुबूव्वत के साथ बेवफ़ाई है जो मुक़र्रिरीन और वाइज़ीन मदहे नबी (स0अ0व0) के नाम पर कभी–कभी और अम्बिया की तन्क़ीस करते हैं वह ख़ुद रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के भी वफ़ादार नहीं, तक़ाबुल के बग़ैर रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के मदह व तौसीफ़ करने में कोई हर्ज नही है।

फ़िलिस्तीनी भाई–बहनों ने सहाबा की यादें ताज़ा कर दी

मौलाना मुहम्मद ज़ाहिद हुसैन नदवी जमशेदपुरी

नबी (स0अ0व0) के ज़माने से दूर, बहुत दूर चौदह सौ चालीस साल गुज़रने के बाद क्या आज के ज़माने में भी, जो फ़ित्नों का ज़माना है, क्या इसका तसव्वुर किया जा सकता था कि आज के ज़माने में उन ख़ैरुलकुरून के लोगों, नबी (स0अ0व0) के इशारों पर अपनी जानें फ़िदा करने वाले हक़ीक़ी ईमान वालों के नक़्शे क़दम पर चलने वाले लोग भी मौजूद होंगे और वह भी सिर्फ़ मर्द नहीं औरतें भी बल्कि नन्हे–नन्हे बच्चे भी, सुब्हान अल्लाह हम अपनी लाख हरमा नसीबियों के बावजूद ख़ुशनसीब हैं कि हमने उन सच्चे मुसलमानों और हक़ीक़ी मोमिनों का ज़माना पाया और इस्लाम की राह में उनकी अज़ीम क़ुर्बानियों को देख रहे हैं। कभी–कभी ताज्जुब होता है कि आख़िर यह किस मिट्टी से बने हुए लोग हैं, उनका ईमान कितना ताक़तवर है, अल्लाह व रसूल से उन्हें किस क़द्र मुहब्बत है, मस्जिदे अक़्सा की हिफ़ाज़त और बाज़याबी के लिए अपनी जानों का नज़राना पेश करने का कैसा जज़्बा–ए–बेकरां है उनके सीनों में कि घर के घर मलबों में तब्दील हो गए, ख़ानदान के ख़ानदान उजड़ गए, बाप की नज़र के सामने बेटा शहीद हो रहा है, बीवी के सामने शहीद शौहर की लाश लाई जा रही है और हद तो यह है कि नन्ही–नन्ही सी मासूम जानें, मां–बाप के जिगर गोशे उनकी नज़रों के सामने दम तोड़ रहे हैं मगर क्या मजाल कि किसी एक की ज़बान पर भी हर्फ़े शिकायत आ जाए, किसी एक ने शिद्दते ग़म में तक़दीरे ख़ुदावन्दी के ख़िलाफ़ कोई बात कह दी हो, नहीं हरगिज़ नहीं बल्कि वहां तो सिर्फ़ "अल्लाह हमारे लिए काफ़ी है और वह बेहतरीन कारसाज़ है" के ज़मज़मे हैं। अल्लाहु अकबर के नारे हैं, इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन की रट है, "ऐ अल्लाह हमारे शहीदों को क़ुबूल फ़रमा" की फ़रियाद है, लड़ते–लड़ते जब कोई मुजाहिद जामे शहादत नोश कर रहा है तो उसके जनाज़े में "अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और शहीद अल्लाह का महबूब है" के तराने पढ़े जा रहे हैं, माओं ने हज़रत ख़न्सा (रज़ि0) की याद ताज़ा कर दी, जब उन्होंने कादसिया की जंग में अपने चार–चार बेटों को क़िताल पर उभारते हुए फ़रमाया था कि ऐ मेरे बच्चो! तुमने अपनी चाहत से इस्लाम क़ुबूल किया और हिजरत की है, ख़ुदा की क़सम तुम सब एक बाप के फ़रज़न्द और एक मां की औलाद हो, ऐसी मां जिसने तुम्हारे बाप के साथ ख़यानत की न तुम्हारे मामूओं को रुस्वा किया, न तुम्हारे हसब व नसब को बट्टा लगाया और तुम अच्छी तरह जानते हो कि अल्लाह तआला ने काफ़िरों से लड़ने पर कैसा अज़ीम सवाब लिख दिया है और तुम अच्छी तरह जानते हो कि बाक़ी रहने वाली आख़िरत फ़ना हो जाने वाली दुनिया से कहीं बेहतर है, अल्लाह तआला इरशाद फ़रमाते हैं:

"ऐ ईमान वालो! सब्र करो और आपस में एक–दूसरे की हिम्मत व ढारस बंधाओ और मोर्चाबन्द हो जाओ और अल्लाह से डरते रहो कि तुम कामयाब हो सको।" लिहाज़ा जब तुम कल सुबह अच्छी हालत में सुबह करो तो अच्छी तरह चौकन्ना होकर अपने दुश्मनों से लड़ने के लिए और अपने दुश्मनों पर अल्लाह से मदद की उम्मीद लगाए हुए निकल जाना और जब तुम देखना कि जंग की आग भड़क चुकी है और घमसान का रण पड़ चुका है तो तुम भी मैदान में कूद जाना और दुश्मन के सरदार का सर क़लम कर देना, यक़ीनन तुम हमेशा रहने वाले घर में माले ग़नीमत और इज़्ज़त व करामत से सरफ़राज़ होगे और जब उनके चारों बेटों की शहादत की ख़बर उन तक पहुंची तो उन्होंने कोई भी ग़म का मर्सिया नहीं कहा बल्कि यह कहा कि शुक्र है अल्लाह का जिसने हमें उनकी शहादत से सरफ़राज़ फ़रमाया और मैं अल्लाह से उम्मीद रखती हूं कि अल्लाह तआला मुझे अपनी रहमत के साए में उनके साथ जमा फ़रमा देगा।

रसूलुल्लाह (स०अ०व०) और औरतों का हक़

मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

औरतों के हुक़ूक़ को लेकर इस्लाम पर ऐतराज़ पहले भी किये गये हैं और अब भी किये जा रहे हैं और आगे भी किये जाते रहेंगे, इस उनवान से इस्लाम पर एतराज़ करने वाले या तो वह जाहिल हैं जो न तो इस्लाम की तालीमात से वाक़िफ़ हैं और न इस्लाम से पहले औरत की हालत से, या दिल के वह रोगी हैं जो जानते तो सबकुछ हैं लेकिन हसद, कीना और अदावत ने उनको झूठ बोलने पर मजबूर कर रखा है, या फिर वह बेचारे हैं जो सिर्फ़ सुनी–सुनाई बातों पर यक़ीन करके लोगों की हां में हां मिलाने लगते हैं, यानि बीना होते हुए भी नाबीना बन जाते हैं, आइये अब देखते हैं कि आप (स०अ०व०) के वास्ते से इस्लाम ने औरतों को क्या दिया।

रसूलुल्लाह (स०अ०व०) की बेसत से पहले अरब मुआशरे में औरत को किस निगाह से देखा जाता था और उसके साथ क्या सुलूक किया जाता था, सूरह नहल की यह आयत इसकी पूरी तस्वीर खींच कर रख देती है:

{وَإِذَا بُشِّرَ أَحَدُهُمْ بِالأُنثَى ظَلَّ وَجْهُهُ مُسْوَدّاً وَهُوَ كَظِيمٌ، يَتَوَارَى مِنَ الْقَوْمِ مِن سُوءِ مَا بُشِّرَ بِهِ أَيُمْسِكُهُ عَلَى هُونٍ أَمْ يَدُسُّهُ فِي التُّرَابِ أَلاَ سَاءَ مَا يَحْكُمُونَ}

"जब उन्हीं में से किसी को लड़की की ख़ुशख़बरी दी जाती है तो वह अंदोहनाक हो जाता है और उसका चेहरा स्याह हो जाता है और लोगों से छिपता–फिरता है (और सोचता है) कि आया ज़िल्लत बर्दाश्त करके लड़की को ज़िन्दा रहने दे या ज़मीन में गाड़ दे? देखो यह जो तजवीज़ करते हैं बहुत बुरी है।" (अलकुरआन)

इस्लाम से पहले अबर मुआशरे में जब किसी का शौहर मर जाता तो उसके बेटे और रिश्तेदार उसकी बीवी के वारिस हो जाते, अगर वह चाहते तो किसी से उसकी शादी कर देते और अगर चाहते तो उसको शादी करने से रोक देते और उसको क़ैद कर देते यहां तक कि वह घुट–घुट कर मर जाती। कुरआन करीम में औरत और मर्द के दरमियान मसावात का पूरा लिहाज़ रखा गया है हत्ता कि ईमान, अमल, जज़ा व सज़ा में भी औरत और मर्द को बराबर रखा गया है:

{إِنَّ الْمُسْلِمِينَ وَالْمُسْلِمَاتِ وَالْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ وَالْقَانِتِينَ وَالْقَانِتَاتِ وَالصَّادِقِينَ وَالصَّادِقَاتِ وَالصَّابِرِينَ وَالصَّابِرَاتِ وَالْخَاشِعِينَ وَالْخَاشِعَاتِ وَالْمُتَصَدِّقِينَ وَالْمُتَصَدِّقَاتِ وَالصَّائِمِينَ وَالصَّائِمَاتِ وَالْحَافِظِينَ فُرُوجَهُمْ وَالْحَافِظَاتِ وَالذَّاكِرِينَ اللَّهَ كَثِيراً وَالذَّاكِرَاتِ أَعَدَّ اللَّهُ لَهُم مَّغْفِرَةً وَأَجْراً عَظِيماً}

"बेशक मुसलमान मर्द और मुसलमान औरतें, अहले ईमान मर्द और अहले ईमान औरतें, इताअत करने वाले मर्द और इताअत करने वाली औरतें, सच्चे और खरे मर्द और सच्ची और खरी औरतें, सब्र करने वाले मर्द और सब्र करने वाली औरतें और रोज़ा रखने वाले मर्द और रोज़ा रखने वाली औरतें और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करने वाले मर्द और हिफ़ाज़त करने वाली औरतें और अल्लाह को कसरत से याद करने वाले मर्द और अल्लाह को याद करने वाली औरतें उन सबके लिए अल्लाह ने मग़्फ़िरत और अज़ीम अज्र का इन्तिज़ाम फ़रमा रखा है।" (अलकुरआन)

दूसरी जगह फ़रमाया:

{مَنْ عَمِلَ سَيِّئَةً فَلَا يُجْزَى إِلَّا مِثْلَهَا وَمَنْ عَمِلَ صَالِحاً مِّن ذَكَرٍ أَوْ أُنثَى وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَأُوْلَئِكَ يَدْخُلُونَ الْجَنَّةَ يُرْزَقُونَ فِيهَا بِغَيْرِ حِسَابٍ}

"जो बुरे काम करेगा उसको बदला भी वैसा ही मिलेगा और जो नेक काम करेगा मर्द हो या औरत और वह साहिबे ईमान भी होगा तो ऐसे लोग बेहिश्त में दाख़िल होंगे, वहां उनको बेशुमार रिज़्क़ मिलेगा।" (अलकुरआन)

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः

"जिसने दो बच्चियों की परवरिश की यहां तक कि वह बालिग़ हो जाएं तो मैं और वह इस तरह होंगे (आप (स0अ0व0) ने दो उंगलियों को मिलाकर बताया)।" (मुस्लिम)

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः

"जिसकी तीन बेटियां हों या तीन बहनें हों या दो बेटियां हों या दो बहनें हों और वह उनकी अच्छी तरबियत करता हो और वह उनके बारे में अल्लाह से डरता हो, तो उसके लिए जन्नत है।" (तिरमिज़ी)

"नबी करीम (स0अ0व0) औरतों की तालीम का बड़ा एहतिमाम फ़रमाते थे, आपने औरतों की तालीम के लिए एक दिन मख़सूस कर रखा था, उस दिन वह सब जमा होतीं और आप (स0अ0व0) उनको तालीम देते।" (मुस्लिम)

आप (स0अ0व0) ने औरतों के बारे में फ़रमायाः

"सुनो! औरतों के साथ अच्छा मामला रखो।" (अलहदीस)

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने शौहरों को बीवियों पर ख़र्च करने की तरग़ीब दी, रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः

"तुम जो भी अल्लाह की रज़ा के लिए ख़र्चा करते हो उस पर तुमको ज़रूर अज्र मिलेगा यहां तक कि जो कुछ अपनी बीवी के मुंह में रखते हो तो उस पर भी सवाब मिलेगा।" (मुत्तफ़िक़ अलैह)

नबी करीम (स0अ0व0) ने मर्दों से कहा कि सबसे बेहतर ख़र्च वह ख़र्च है जो मर्द अपने बीवी–बच्चों पर करता हैं।

"सबसे बेहतर और मुबारक रक़म वह है जो आदमी अपने बीवी–बच्चों पर ख़र्च करे।" (मुस्लिम)

हज़रत जाबिर (रज़ि0) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमाया कि इन्सान की मीज़ाने अमल में सबसे पहले जो अमल रखा जाएगा वह अपने अहलो अयाल पर ख़र्च करने और उनकी ज़रूरतों को पूरा करने का नेक अमल है। (रवाहु तिबरानी)

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः

"शौहर जब अपनी बीवी को पानी पिलाता है तो उस पर भी उसको सवाब मिलेगा।" (अहमद)

हज़रत अरबाज़ बिन सारिया (रज़ि0) ने जब यह हदीस सुनी तो फ़ौरन पानी की तरफ़ लपके पानी लेकर अपनी अहिल्या के पास आए, पानी पिलाया और उनको यह हदीस बयान की जो आप (स0अ0व0) से सुनी थी।

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः

"तुममें सबसे अच्छा वह है जो अपनी बीवी के साथ अच्छा हो।" (तिरमिज़ी)

"हज़रत आयशा (रज़ि0) फ़रमाती हैं कि नबी करीम (स0अ0व0) अपने कपड़े ख़ुद सीते थे, अपनी चप्पल ख़ुद टांकते थे और जिस तरह दूसरे लोग अपने घरों के काम करते हैं उसी तरह आप भी घर के काम किया करते थे।" (मुसनद अहमद)

आप (स0अ0व0) ने फ़रमायाः

"ऐ अल्लाह मैं सबसे ज़्यादा दो कमज़ोरों के हक़ में ताकीद करता हूं और उसको अहम क़रार देता हूं, यतीम और औरत।" (अलहदीस)

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने बग़ैर इत्तेला के रात में घर जाने से मना किया।

हज़रत असवद (रज़ि0) ने हज़रत आयशा (रज़ि0) से पूछा कि हुज़ूर (स0अ0व0) का अपनी बीवियों के साथ क्या रवैया रहता था? उन्होंने कहा कि नबी करीम (स0अ0व0) घर के कामों में उनकी मदद फ़रमाते, नर्मी व मुहब्बत से बात करते, हर तरह उनके आराम, उनकी राहत और उनकी ख़ुशी का ख़्याल फ़रमाते थे, आप (स0अ0व0) ने हज़रत आयशा (रज़ि0) से फ़रमायाः

"मैं समझ जाता हूं कि कब तुम मुझसे ख़ुश होती हो और कब नाराज़, उन्होंने कहा, ऐ अल्लाह के रसूल (स0अ0व0)? आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया कि जब तुम ख़ुश होती हो तो कहती हो कि मुहम्मद के रब की क़सम और जब तुम मुझसे नाराज़ होती हो तो कहती हो कि इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) के रब की क़सम, हज़रत आयशा (रज़ि0) ने कहा! आपने सही फ़रमायाः ऐ अल्लाह के रसूल (स0अ0व0)! मेरे दिल से आपकी मुहब्बत कभी ख़त्म नहीं हो सकती।"

संसदीय चुनाव और मुसलमानों की ज़िम्मेदारी

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

इस वक़्त पूरे देश में संसदीय चुनाव का माहौल है। लेख लिखते समय तीन चरण बीत चुके हैं और अभी चार चरणों में चुनाव बाक़ी है। इसमें शुब्हा नहीं कि इलेक्शन के ज़माने में हुक्मरां तबक़े का अवाम से रब्त बढ़ जाता है और अवाम को भी अपने लीडरों की शक्ल में एक रोशन मुस्तक़बिल नज़र आने लगता है। हुक्मरां और अवामी तबक़े का यही वह आमेज़ह है जो उन्हें इलेक्शन के ज़माने में आपस में जोड़ देता है। तमाम सियासी लीडर जगह–जगह सियासी जलसे करते हैं, सियासी जुलूस निकालते हैं और घर–घर पहुंचकर अवाम से वोट मांगते हैं और उनके मसलों को हल करने का यक़ीन दिलाते हैं और उनके सामने बेशुमार न पूरे होने वाले वादे भी करते हैं और बेचारे अवाम उन सियासी बाज़ीगरों के जाल में फंस जाते हैं।

अफ़सोस की बात है सियासी उम्मीदवार और सियासी जमाअत के मन्शूर (घोषणापत्र) में लम्बे–चौड़े वादों की फ़ेहरिस्त होती है लेकिन ज़मीनी सतह पर मुल्क का तालीमी मेयार बुलन्द करने, इन्फ्रास्ट्रक्चर को मज़बूत करने, उसकी मईशत (इकोनॉमी) को दुरुस्त करने, बेरोज़गारी को ख़त्म करने और सबसे बढ़कर पूरे मुल्क में अमन व अमान की फ़िज़ा क़ायम करने और बदउनवानी का बाज़ार बन्द करने का वादा या दावा यक़ीनी तौर पर कोई सियासी रहनुमा या सियासी जमाअत नहीं करती।

इस अफ़सोसनाक सूरतेहाल का एक बुनियादी सबब यह है कि इलेक्शन का निज़ाम ख़ालिस जम्हूरी क़दरों (लोकतान्त्रिक मूल्यों) पर क़ायम नहीं है बल्कि उसका शीशमहल मज़हब व तहज़ीब (धर्म व सभ्यता) और ज़ात–बिरादरी की बुनियादों पर तामीर है। यही वजह है कि इलेक्शन के मौक़े पर सियासी जमाअतें वोट मांगते वक़्त लोगों की नफ़्सियात (मानसिकता) का गहरा मुताला करती हैं और उसकी के मुताबिक़ उनके ज़हनों में ज़हर घोलने की कोशिशें करती हैं, उन्हें बख़ूबी मालूम है कि हमें वोट की ताक़त मुल्क के अन्दर तामीरी व मुस्बत (सकारात्मक) काम करने के बजाय मज़हब के नाम पर दुश्मनी का ज़हर घोलकर हासिल हो सकती है या ज़ात–बिरादरी के लड़ाई–झगड़ों को बढ़ावा देकर, यह वह घिनावनी ज़हनियत है, जिसको पूरा करने के लिए चाहे उन्हें इन्सानी ख़ून की होली खेलनी पड़े और चाहे पूरा देश बारूद के एक ढेर पर आकर खड़ा हो जाए, उसकी उन्हें ज़रा भी परवाह नहीं बल्कि उनके सामने महज़ एक ही हदफ़ होता है कि वह मुल्क में किस तरह इक़्तिदार (सत्ता) हासिल कर सकते हैं? वाक़्या यह है कि हुकूमत और इक़्तिदार को हासिल करने की यही वह नाजाएज़ तलब और चाहत है जिसने पूरे मुल्क को खोखला बनाकर रख दिया है।

मज़हब और ज़ात बिरादरी की बुनियाद पर इस गन्दी सियासत का नतीजा है कि आज हिन्दुस्तानी लोग और ख़ासकर यहां की अक़्लियतें (अल्पसंख्यक) ज़िन्दगी के किसी शोबे (हिस्से) में ख़ुद को महफ़ूज़ नहीं तसव्वुर कर रहे हैं। इसलिए कि बक़ौल हज़रत मौलाना अली मियां नदवी (रह0) "इन्तिज़ामी ख़राबी, फ़र्ज़ ने अनजान होना, रिश्वतख़ोरी और पैसे का लालच अपनी इन्तिहा को पहुंच चुका है।" ज़ाहिर है कि मुल्क के अन्दर इन ख़राबियों के फैलने की बुनियादी वजह यही है कि हुकूमतों को उनकी इस्लाह में कोई दिलचस्पी नहीं बल्कि उनकी दिलचस्पी तो इसमें है कि मुल्क के अन्दर सोये हुए फ़ित्नों को कैसे जगाया जाए, मज़हब और ज़ात–बिरादरी की बुनियाद पर आपस में कैसे लड़ाया जाए और फिर उसके ज़रिये वोट बैंक को कैसे मज़बूत किया जाए?! इसीलिए सियासी जमाअतें किसी मुल्कगीर (राष्ट्र स्तरीय) अवामी इस्लाही मुहिम चलाने के बजाए ऐसी शरपसंद ताक़तों को हवा देती हैं जो मुल्क के हालात को ख़राब करने में मुआविन (सहयोगी) हों।

हमारे मुल्क का यह वह अलमिया (दर्द) है जिसकी इस्लाह की तवक़्क़ो किसी भी सियासी जमाअत की फ़तेह व कामरानी या शिकस्त व रीख़्त से नहीं की जा सकती। सच्ची बात तो यह है कि तक़रीबन सभी सियासी जमाअतों

का मन्हज–ए–सियासत एक सा है, फिर भी उनमें कुछ का नुक़सान कम और कुछ का नुक़सान ज़्यादा ज़रूर है।

इसमें शुब्हा नहीं है कि मुल्क के सियासी रहनुमाओं ने सियासी निज़ाम को इस हद तक ग़लीज़ कर दिया है कि इसकी इस्लाह (सुधार) का अलम उठाने वाले को भी महफ़ूज़ नहीं समझा जा सकता, हर सियासी लीडर चाहे जितने ही बुलन्द दावे रखता हो लेकिन गदिर्शे ज़माना से उसकी सारी हक़ीक़त खुलकर सामने आ ही जाती है।

सच्ची बात यह है कि जम्हूरी तर्ज़े हुकूमत (लोकतान्त्रिक व्यवस्था) के इस मुतअफ़्फ़न (सड़े हुए) निज़ाम की इस्लाह किसी लीडर के इस्लाही दावों से ज़्यादा अवाम के आहिनी अज़्म (फ़ैलादी इरादा) और आक़िलाना नज़्म पर मौक़िफ़ (आधारित) है। हर पांच साल बाद जम्हूरियत का ढ़िंढ़ोरा पीटने की बुनियाद पर अवाम को यह अख़्तियार हासिल होता है कि वह उन सियासी रहनुमाओं को आईना दिखा सकें, लेकिन एक लम्बे–चौड़े मुल्क में यह बात किसी एक फ़र्द और किसी एक बिरादरी के ज़रिये मुमकिन नहीं, बल्कि इसके लिए दूरअंदेशी के साथ एक ठोस पॉलिसी की ज़रूरत है ताकि मुल्क का एक–एक वोट सही जगह पर इस्तेमाल हो सके और सियासी लीडरों को उनकी हैसियत का अंदाज़ा हो सके, मगर अफ़सोस की बात यह है कि एक तरफ़ अगर सियासी निज़ाम बहुत ही ख़राब और अपंग है, तो दूसरी तरफ़ हमारी अवाम भी इन्तिहाई नासमझी का सुबूत देते हैं। कभी–कभी वह अपना वोट कुछ ज़ाति ग़रज़ की बुनियाद पर बेच देते हैं, अगर कोई सियासी बाज़ीगर उन्हें चंद टकों का लालच दे दे तो वह अपने आस–पास के तमाम हालात से बेख़बर हो जाते हैं, या अगर कोई सियासी लीडर उनके सामने मज़हब की बुनियाद पर जज़्बाती बात कर दे तब भी वह अपनी सारी तकलीफ़ भूल जाते हैं और इस तरह हर मर्तबा एक नाअहल (अयोग्य) आदमी को कुर्सी का हक़दार बना देते हैं, यही वजह है पूरा मुल्क ज़वाल की तरफ़ जा रहा है।

बिला शुब्हा इलेक्शन के मौक़े पर मुल्क की हर कम्यूनिटी और हर फ़र्द की यह ज़िम्मेदारी है कि वह अपने वोट की क़ीमत और अहमियत को समझे और उसके सही इस्तेमाल का पुरज़ोर दाई भी बने, लेकिन इस सिलसिले में सबसे बढ़कर मुसलमानों की भी ज़िम्मेदारी है जिनकी हालत मौजूदा दौर में महज़ सियासी मोहरों की रह गई है और हर सियासी फ़रीक़ की नज़र में उनकी हैसियत शतरंज की बिसात से ज़्यादा नहीं है। आज़ादा हिन्दुस्तान की तमाम अक़्लियतों में मुसलमान वाहिद वह क़ौम है जिनकी तादाद अक्सरियत से आंख मिलाती है, मगर अफ़सोस की बात है कि मुल्क की इतनी बड़ी अक़्लियत होने के बावजूद भी उनका इस मुल्क की सियासत में कोई ख़ास सियासी वज़न नहीं है। इसके तमाम वजहों में एक बुनियादी वजह ख़ुद उन्हीं की ग़ैर दानिशमंदी भी है, अगर मुसलमानों ने इस मुल्क में सियासी बसीरत का सुबूत दिया होता तो शायद तस्वीर का रुख़ दूसरा होता। अफ़सोस की बात है कि मुसलमानों में बाज़ ने सियासत के मैदान की फ़तेहयाबी के लिए अमलन इसमें दाख़िल होना ज़रूरी समझा तो वह भी उसकी ग़लाज़त का एक हिस्सा बनकर रह गए और बाज़ ने इस ग़लाज़त से ऐसे दूरी बनाना फ़र्ज़ समझा कि वह सियासी मैदान में अछूत ही तसव्वूर कर लिए गए। ज़रूरत थी एक मुतवाज़िन (संतुलित) तर्ज़े फ़िक्र और अमल की जो इस मुल्क में उनकी हैसियत को बावज़न और बुलन्द करता और इस मुल्क की सियासत का मदार उन्हीं की दानिशमंदी पर मौक़ूफ़ समझा जाता। वाक़्या यह है कि अगर आज भी पूरे मुल्क के मुसलमान दानिशमंदी का सुबूत दें और उनका कुल वोट बरमहल इस्तेमाल हो और उनका वोट ज़ाया होने से बच जाए तो यक़ीनन हर इलेक्शन में अपना असर दिखा सकते हैं और अपना वज़न तस्लीम करा सकते हैं।

2024 का संस्दीय इलेक्शन जो हक़ीक़त में इस मुल्क की किस्मत के लिए फ़ैसलाकुन इलेक्शन है, उसमें मुल्क के तमाम बाशिन्दों के अलावा सबसे बढ़कर मुसलमानों की सियासी बसीरत का भी बहुत बड़ा इम्तिहान है कि हर इलाक़े में वह अपने वोट की क़ीमत को पहचानें और पूरी सियासी बसीरत के साथ ऐसे फ़र्द या फ़रीक़ को अपना वोट दें जिसका ज़रर इस मुल्क और मुसलमानों के हक़ में कम से कम हो, लेकिन अगर उन्होंने इस मर्तबा भी चंद महदूद ज़ाति मुनाफ़े पर क़नाअत कर ली तो यक़ीनन इसका ख़सारा हरएक को होगा और ख़ास तौर पर मुसलमानों को एक आज़ाद फ़िज़ा में अपने क़ौमी व मिल्ली शआएर (पहचान) के साथ ज़िन्दगी गुज़ारना मुश्किल होगा, मौजूदा नागुफ़्ता बिही (अफ़सोसनाक) हालात में मुसलमानों को अपने वोट की ताक़त को समझना चाहिए और इसको एक मिल्ली फ़रीज़ा समझते हुए ज़्यादा से ज़्यादा हिस्सा लेना चाहिए, इंशा अल्लाह हमारा एक वोट ही हिन्दुस्तानी की सियासी क़िस्मत बदलने के लिए काफ़ी होगा।

वोट के सही इस्तेमाल की ज़रूरत

"मौजूदा दौर की गन्दी सियासत ने इलेक्शन और वोट के लफ़्ज़ों को इतना बदनाम कर दिया है कि उनके साथ मक्कारी और फ़रेब, झूठ, रिश्वत और दग़ाबाज़ी का तसव्वुर लाज़िम ज़ात होकर रह गया है। इसीलिए अक्सर शरीफ़ लोग इस झंझट में पड़ने को मुनासिब ही नहीं समझते और यह ग़लतफ़हमी तो बेहद आम है कि इलेक्शन और वोटों की सियासत का दीन व मज़हब से कोई वास्ता नहीं।

शरई नुक़्ता–ए–नज़र से वोट की हैसियत शहादत और गवाही की सी है और जिस तरह झूठी गवाही देना हराम और नाजाएज़ है, उसी तरह ज़रूरत के मौक़े पर शहादत को छिपाना भी हराम है। कुरआन करीम का इरशाद है:

"और तुम गवाही न छुपाओ और जो शख़्स गवाही को छुपाए उसका दिल गुनाहगार है।"

और हज़रत अबू मूसा अशअरी (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स०अ०व०) ने इरशाद फ़रमाया: "जिसको किसी शहादत के लिए बुलाया जाए फिर वह उसे छिपाए तो वह ऐसा है जैसे झूठी गवाही देने वाला।"

वोट भी बिलाशुब्हा एक शहादत है, लिहाज़ा वोट को महफ़ूज़ रखना दीनदारी का तक़ाज़ा नहीं, उसका ज़्यादा से ज़्यादा सही इस्तेमाल करना हर मुसलमान का फ़र्ज़ है। यूं भी सोचने की बात है कि अगर शरीफ़, दीनदार और मोतदिल मिज़ाज के लोग इन्तिख़ाबात के तमाम मामलात से बिल्कुल अलग होकर बैठ जाएं तो इसका मतलब इसके सिवा और क्या हो सकता है कि वह यह पूरा मैदान शरीरों, फ़ित्नापरदाज़ों और बेदीन अफ़राद के हाथों में सौंप रहे हैं।

बहुत से लोग यह भी सोचते हैं कि लाखों वोटों के मुक़ाबले में एक शख़्स के वोट की क्या हैसियत है? अगर वह ग़लत इस्तेमाल भी हो जाए तो मुल्क व क़ौम के मुस्तक़बिल पर क्या असरअंदाज़ हो सकता है? लेकिन ख़ूब समझ लीजिए कि अव्वल तो हर शख़्स वोट डालते वक़्त यही सोचने लगे तो ज़ाहिर है कि पूरी आबादी में कोई एक वोट भी सही इस्तेमाल नहीं हो सकेगा, फिर दूसरी बात यह है कि वोटों की गिनती का जो निज़ाम हमारे यहां राएज है उसमें सिर्फ़ एक अनपढ़, जाहिल शख़्स का वोट भी मुल्क व मिल्लत के लिए फ़ैसलाकुन हो सकता है, अगर एक बेदीन, बदअक़ीदा और बदकिरदार उम्मीदवार के बैलेट बाक्स में सिर्फ़ एक वोट दूसरे से ज़्यादा चला जाए तो वह कामयाब होकर पूरी क़ौम पर मुसल्लत हो जाएगा। इस तरह कई बार सिर्फ़ एक जाहिल और अनपढ़ इन्सान की मामूली सी ग़फ़लत, भूल–चूक या बददयानती भी पूरे मुल्क को तबाह कर सकती है। इसलिए राएज निज़ाम में एक–एक वोट क़ीमती है और यह हर फ़र्द का शरई, अख़्लाक़ी, क़ौमी और मिल्ली फ़रीज़ा है कि वह अपने वोट की इतनी तवज्जो और अहमियत के साथ इस्तेमाल करे जिसका वह फ़िल वाक़ेअ मुस्तहिक़ है।

मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी

(मुलख़्ख़स; फ़िक़्ही मक़ालात: 2/287–295)

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 5 | May 2024 | Volume: 16

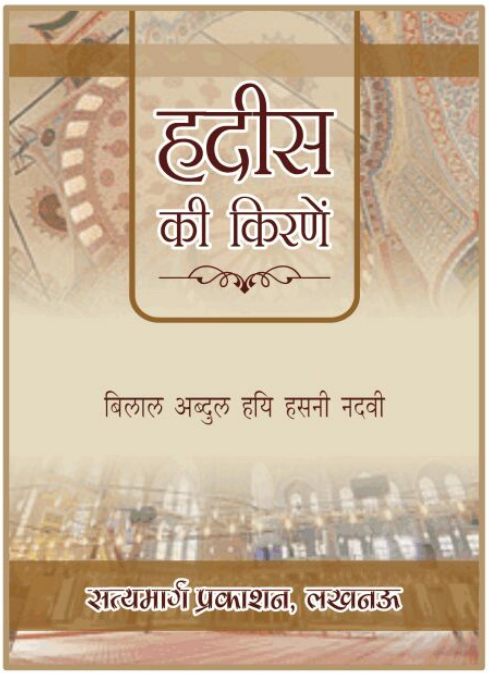

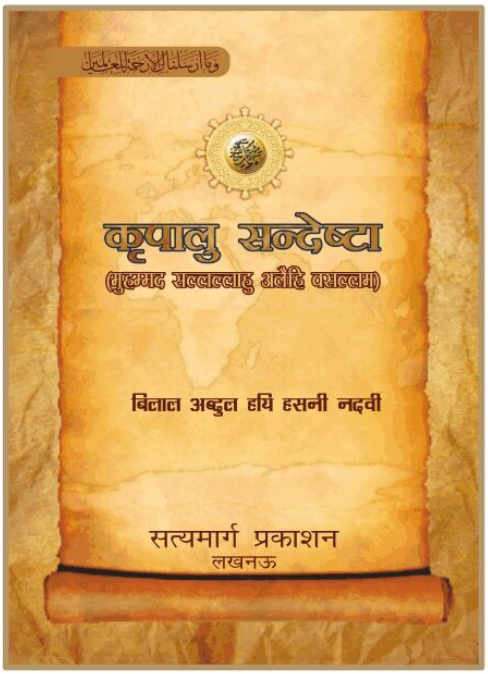

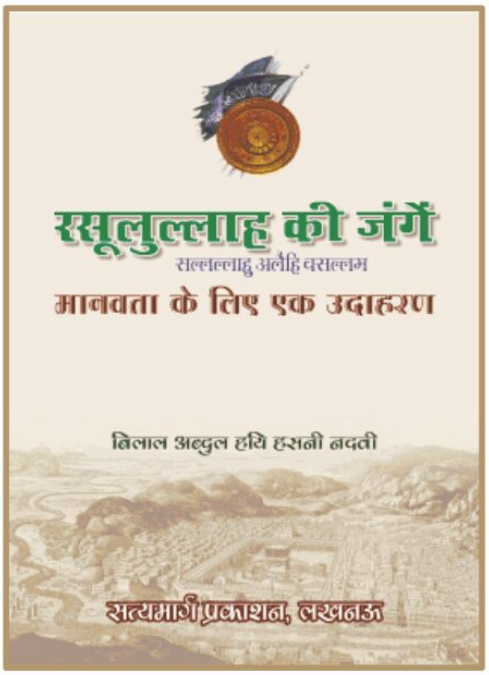

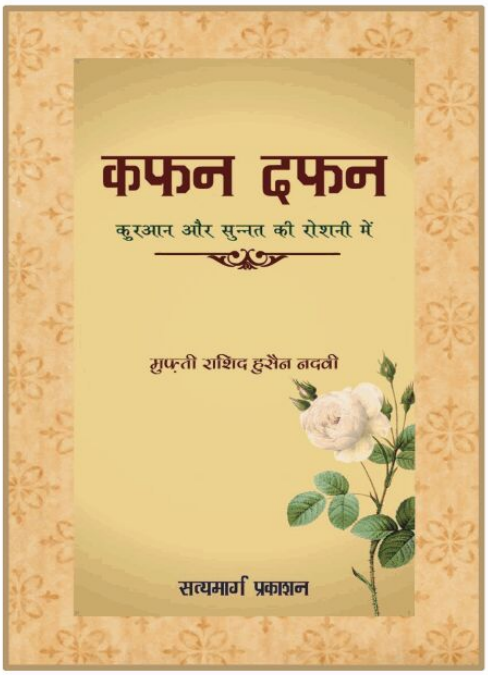

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.